देवी पूजा रहस्य
(देवी महात्म्य)

लेखक
स्वामी ज्योतिर्मयानन्द

अनुवादक
''योगिरत्न'' डा० शशिभूष मिश्र

मूल्य : 90/-
विदेशो में: 10अमेरिकन डॉलर

आध्यात्मिक पुस्तकों का केन्द्र

प्रकाशक—इन्टरनेशनल योग सोसायटी, लालबाग, लोनी-201 102
गाजियाबाद, उ० प्र० (भारत)
फोन : STD : 0120-4600237, दिल्ली से लोकल—91-4600237
e:mail:iys@vsnl.com

प्रथम संस्करण 2001

मूल अँग्रेजी पुस्तक—Mysticism of the Mother Worship
का अविकल हिन्दी अनुवाद।

ISBN 81-85883-33-5
अनुवादक—'योगिरत्न' डा० शशिभूषण मिश्र

मुद्रक-योग ज्योति प्रेस, लालबाग, लोनी (गाजियाबाद)

दुर्गा, लक्ष्मी और सरस्वती
के रूप में अभिव्यक्त महादेवी और
प्रष्फुटित हो रहे पुष्प सदृश देवी भक्त,
जो मानवता की नैतिक तथा आध्यात्मिक उन्नति
हेतु आत्मज्ञान के परिमल का निरन्तर प्रसार
कर रहे हैं, को यह कृति
समर्पित है।

स्वामी ज्योतिर्मयानन्द

अनुवादकीय

''**देवीपूजा का रहस्य**'' पुस्तक तैयार होने पर जो अद्भुत आनन्द और आत्मसंतोष का अनुभव हुआ उसे शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता है। संभवतः इसका कारण यह है कि अनुवाद के क्रम में परमात्मा की आराधना मातृशक्ति के रूप में कैसे की जा सकती है, इसकी स्पष्ट और सहज जानकारी प्राप्त हुई तथा दुर्गा सप्तशती की कथाओं का गुह्य और प्रतीकात्मक अर्थ ज्ञात हो जाने के पश्चात ऐसा लगा कि इन कथाओं के माध्यम से एक सामान्य व्यक्ति आत्मसाक्षात्कार के परम लक्ष्य तक बड़ी सुगमता और सहजता से पहुँच सकता है।

पूज्य गुरुदेव श्री स्वामी ज्योतिर्मयानन्द जी की लेखनी में जो शक्ति, स्वानुभूत सत्य और दिव्य स्पन्दन विद्यमान है, उसे हिंदी अनुवाद में लाना असंभव है। इसके लिए मूल कृति "Mysticism of Mother Worship" का अध्ययन करने का मैं विज्ञ पाठकों को परामर्श देता हूँ।

यह अनुवाद स्वान्तः सुखाय पूज्य गुरुदेव के पावन चरणों में अर्पित एक श्रद्धा सुमन है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि श्रीगुरुदेव अपने इस सेवक द्वारा समर्पित भाव प्रसून को अवश्य स्वीकार कर ने की अनुकम्पा करेंगे।

माँ दुर्गा, महालक्ष्मी और देवी सरस्वती का अनन्ताशीर्वाद इस पुस्तक के पाठकों को ज्ञान, वैराग्य, षट्सम्पत्त और मुमुक्षत्व के रूप में प्राप्त हो! यही हमारी देवी से प्रार्थना है।

इन्टरनेशनल योग सोसायटी
लालबाग, लोनी, गा०बा०

योगिरत्न डा० शशिभूषण मिश्र

प्राक्कथन

असंख्य भक्तों की ओर से इस प्रस्तक की लम्बी अवधि से माँग हो रही थी। इस पुस्तक में दुर्गासप्तशती या देवी महात्म्य जिसे चण्डी पाठ भी कहा जाता है नामक पुस्तक का सार दिया गया है। मूल रूप से यह मार्कण्डेय पुराण जिसे व्यास देव ने लिखा था का एक अंश है।

देवी महात्म्य एक अद्‌भुत ग्रन्थ है जिसमें परमेश्वर को मातृरूप में प्रस्तुत किया गया है। इसमें जीव की अँधकार से प्रकाश और दुःख के बन्धन से परमानन्द की मुक्ति की यात्रा को अत्यन्त रहस्यवादी कथाओं के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

जीव को अन्तिम लक्ष्य तक पहुँचने की इस प्रक्रिया में बहुत लड़ाइयाँ लड़नी पड़ती है। बहुत सारे भ्रमों को तोड़ना होता है और मन–मस्तिष्क के अनेक दुर्लभ सद्‌गुणों का विकास करना आवश्यक है। साधक मार्गदर्शन, सम्बल, बाधा मुक्ति, सद्‌गुणों के विकास और आत्मज्ञान के लिए देवी की ओर उन्मुख होते हैं।

दुर्गा के रूप में देवी व्यक्तित्व के विकारों (मल) को दूर कर साधक को चित्तशुद्धि की ओर अग्रसर करती हैं। लक्ष्मी के रूप में देवी साधक में विनम्रता, सत्यवादिता, निर्भयता और चित्त की स्थिरता जैसे दिव्य गुणों को उत्पन्न करती हैं। अपनी प्रत्येक अभिव्यक्ति में देवी आसुरी शक्तियों से घनघोर संग्राम करती हैं। इन कथाओं के माध्यम से आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त करने की

कला का सुन्दर चित्रण किया गया है। स्वामी ज्योतिर्मयानन्द जी महाराज ने अपनी अद्भुत अन्तःप्रज्ञा से इन गुह्य कथाओं का प्रतीकार्थ बता कर इस महान सद्ग्रन्थ रूपी सागर में छुपे रत्नों को उद्घाटित कर पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है।

माता के रूप में परमेश्वर की आराधना करने की धारणा न केवल भारत के भक्तों को आकृष्ट किया है, बल्कि विदेशों के असंख्य लोगों को भी प्रेरित किया है। सच्चाई यह है कि परमेश्वर हजार माताओं से अधिक स्नेहिल और हजार पिताओं से भी अधिक शक्तिशाली है।

प्रति वर्ष पूज्य गुरुदेव श्री स्वामी ज्योतिर्मयानन्द जी के मार्गदर्शन में नवरात्रि पूजा की जाती है। शान्त ब्रह्ममुहूर्त्त में जब आश्रम परिसर अँधेरे के काले कम्बल से बाहर निकलता और पक्षियों के मधुर गान से जागता है श्री स्वामी जी नवरात्र की पवित्र पूजा किया करते हैं। प्रति दिन देवी की कथाओं का गुह्यार्थ तो श्री स्वामी जी बताते ही हैं इस के साथ व्यावहारिक जीवन में उन सिद्धान्तो को कैसे प्रयुक्त किया जा सकता है, इस विषय पर भी प्रकाश डालते हैं। उपस्थित भक्त उपदेशों का श्रवण करते, भाव भरे देवी के भजन सुनते, गुरु का आशीर्वाद प्राप्त करते और पवित्र प्रसाद ग्रहण करते हैं। प्रस्तुत प्रस्तक में श्री स्वामी जी द्वारा नवरात्र पूजा के अवसरों पर दिए गए प्रेरक प्रवचनों को भी सम्मिलित किया गया है।

हम आश्रम के समस्त सहयोगियों और सेवकों के आभारी हैं जिनके अथक प्रयास और सहयोग से यह पुस्तक तैयार हुयी है।

इस पुस्तक के समस्त पाठकों को देवी का आशीर्वाद प्राप्त हो!

स्वामी ललितानन्द
योग रिसर्च फाउन्डेशन
मयामी, फलोरिड, अमेरिका

अनुक्रमणिका

-ॐ-

देवी पूजा की महिमा

माता के रूप में परमेश्वर

परमात्मा के दो रूप हैं–माता और पिता। सत्य, ज्ञान, प्रभुता, अनन्तता, न्याय, उत्कृष्टता, परात्परता और सर्वशक्तिमानता इत्यादि जैसे गुण ईश्वर के पिता स्वरूप से सम्बन्धित हैं। जबकि सुन्दरता, प्रेम, शक्ति, प्रखरता, करुणा, अनन्यता, शाश्वतता और कृपा जैसे गुण परमात्मा के माता से सम्बन्धित हैं। संसार में परमात्मा के इन दो पक्षों की पूजा किसी न किसी रूप में सर्वत्र होती है। हिन्दुओं में परमेश्वर को माता मानकर पूजने की परिपाटी अधिक सनातन और सुविकसित है।

अधिकांश व्यक्ति परमेश्वर को पिता रूप में देखते हैं। परन्तु माता के रूप में परमात्मा की धारणा और अधिक शान्ति तथा पूर्णता प्रदान करती है। क्योंकि पिताभाव से यद्यपि निकटता का बोध होता है, परन्तु हृदय में माता का स्नेह एवं प्रेम की जड़ें पितृ–प्रेम से अधिक गहरी होती है। अपनी माता से कोई भी व्यक्ति कुछ गुप्त नहीं रख सकता। कभी–कभी पिता को प्रसन्न करने के लिए माता की सहायता

लेनी पड़ती है। इसलिए परमात्मा की आराधना माता के रूप में करने की धारणा ईश्वरसाक्षात्कार की ओर जाने वाली सर्वश्रेष्ठ आध्यात्मिक भावना की परिणति है।

यद्यपि माता के रूप में ईश्वर एक ही है, परन्तु जीवों के विकास की विभिन्न अवस्थाओं के अनुसार देवी की अभिव्यक्ति भी विभिन्न रूपों में होती है। इस प्रकार माता, पिता (अपने पति) की सहायता से बाल जीवात्माओं को साधना-पथ पर अग्रसर करती हुई विकास के विभिन्न सोपानों पर चढ़ाती जाती है। जब बाल जीवात्मा को आत्मज्ञान प्राप्त हो जाता है तो वह माता रूप परमब्रह्म के साथ एक रूप होकर जन्म-मृत्यु के चक्र से हमेशा-हमेशा के लिए मुक्त हो जाता है। उसी स्थिति में देवी माता पिता (परमेश्वर) और जीवात्मा पत्र एक रूप हो जाते हैं। यही आत्मसाक्षात्कार की अवस्था है जहाँ सभी प्रकार की द्वैततासमाप्त हो जाती है और परमानन्द का अनुभव होता है।

मार्ग दर्शक के रूप में माता

जिस प्रकार से लौकिक माता अपने बालक को प्रेम और स्नेह से चलना सिखाती है, वैसे ही दिव्य माता बाल आत्माओं (अविकसित जीव) को भी साधना-पथ पर संतुलन बनाये रखने एवं आगे बढ़ने की कला सिखलाती है।

प्रत्येक व्यक्ति के हृदय की गहराई में दिव्य माता निवास करती है। वही मूलतः **आत्मशक्ति** है जो **ज्ञानशक्ति, इच्छाशक्ति** और **क्रियाशक्ति** के रूप में स्वयं को अभिव्यक्त करती है। देवी महात्म्य में निम्नांकित शब्दों से देवता देवी की प्रार्थना करते हैं:–

या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः।।

"उस देवी को नमस्कार है, बार–बार नमस्कार है जो सभी प्राणियों में वर्तमान विष्णुमाता कहलाती हैं।" आगे देवता देवी की स्तुति इस प्रकार से करते हैं,"

"उस देवी को पुनः–पुनः नमस्कार है जो सभी प्राणियों में चेतना, बुद्धि, क्षुधा, छाया, शक्ति, तृष्णा, क्षमा, जाति, लज्जा, कृपा, श्रद्धा, सुन्दरता, समृद्धि, दया, संतोष, माया और भ्रान्ति रूप में वर्तमान है। जो देवी सर्वभूतों के एकमात्र आधार और पोषक हैं उन्हें हमारा बार–बार नमस्कार है।" (देवी महात्म अध्याय–५)

उपरोक्त प्रार्थना में देवी के विभिन्न रूपों का वर्णन है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में इन सबों की अभिव्यक्ति होती है। माता अपने पुत्रों– आध्यात्मिक साधकों को वाह्य और आन्तरिक रूप से मार्गदर्शन करती है। सम्पूर्ण प्रकृति उनके लिए क्रीड़ास्थल है तथा पृथ्वी, अन्तरिक्ष और स्वर्ग सहित समस्त लोक उनकी ही महिमा को प्रकट कर रहे हैं। बाल आत्माओं को निर्देश देने का उनका तरीका भी बहुत रहस्यमय और अलौकिक है। तामसिक और आसुरी

स्तर पर उठने वाली बाधाओं को विनष्ट करने के लिए वे अन्यन्त भयावह दुर्गा के रूप में प्रकट होती हैं। वे ही लौकिक, पारलौकिक और आध्यात्मिक समृद्धि प्रदान कराने वाली महालक्ष्मी हैं। सरस्वती के रूप में यही देवी हंसारूढ़ हो अत्यन्त आकर्षक और शुभ्र रूप धारण कर अमरत्व प्रदान कराने वाले ज्ञान से साधक के अन्तर्मन को प्रकाशित करती हैं।

देवीमाता की अनन्त विभूतियाँ और अभिव्यक्तियाँ हैं। कभी भयानक, कभी मोहिनी और आकर्षक। कभी भ्रामक एवं प्रलोभी। कभी संहारक और कभी अत्यन्त उत्कृष्ट एवं प्रेरक रूपों में देवी माँ साधकों के समक्ष प्रकट होती हैं। जीवात्माओं को ईश्वर की ओर अधिक तीव्र गति से प्रगति कराने के उद्देश्य से देवी माँ विभिन्न परिस्थितियों की चादर ओढ़ कर सामने आती हैं। करुणामयी कितनी ममतामयी हैं देवी!!

नवरात्रि पूजा की महत्ता

भारत में आश्विन मास के शुक्ल पक्ष में नवरात्र पूजा की जाती है। ईश्वर के मातृस्वरूप की पूजा क्रमशः दुर्गा, लक्ष्मी और सरस्वती के रूप में तीन–तीन दिनों की होती है। भारत में साधना के लिए यह समय अनुकूल है; क्योंकि

इस समय तक वर्षा समाप्त हो जाती है और आकाश में सुन्दर तारे टिमटिमाते रहते हैं। वातावरण में शान्त,

सुगन्धित और शीतल वायु का मन्द प्रवाह चलता है। इस सुन्दर प्राकृतिक परिवेश में साधक को देवीमाता की अलौकिक महिमा का स्मरण कराया जाता है। इसलिए असंख्य साधक, आत्मसाक्षात्कार के लिए आवश्यक शक्ति और कृपा प्राप्त करने के उद्देश्य से परमेश्वर के माता पक्ष की पूजा इन दिनों किया करते हैं। देवीपूजा से क्लेशों के काले बादल छँट जाते हैं और कर्मों की धुँध चित्ताकाश से समाप्त हो जाती है जिससे साधक का चित्त स्वर्गिक हंस की तरह श्वेत (परिशुद्ध) हो जाता है, जिसमें ज्ञान रूपी सूर्य का उदय होता है।

नवरात्रि पूजा साधकों के आध्यात्मिक जीवन की प्रगति का प्रतीकात्मक चित्रण करता है और यह बताता है कि माता कैसे अविकसित साधकों को आसुरी और राक्षसी वृत्तियों से मुक्त कराकर उन्नति के सर्वोच्च शिखर पर आसीन करने में सहायक होती है। नवरात्रि पूजा राक्षसों और असुरों (कुवृत्तियाँ) पर साधक की होने वाली विजय का भी परिचायक है। विजयदशमी के दिन ही भगवान राम ने रावण को मार कर रामराज्य की स्थापना किया था।

साधक के जीवन में आसुरी वृत्तियों की अभिव्यक्ति काम, क्रोध, द्वेष, लोभ, मद, मत्सर्य, तृष्णा और अनेक प्रकार की मानसिक विकृतियों के रूप में होती है। दैवीशक्ति करुणा, उदारता, नम्रता, दानशीलता, शुद्धता, निश्चलता, सार्वभौमिक प्रेम और आत्मिक प्रबुद्धता के रूप में अभिव्यक्त होती है। नवरात्रि पूजा का उद्देश्य दैवीशक्तियों को समृद्ध करना, मन और इन्द्रियों को नियंत्रित करना, निम्न मन की

वासनाओं (इच्छा) पर विजय प्राप्त करना और हृदय में प्रकाशित आत्मा की अनुभूति करना है।

यह पहले बताया जा चुका है कि साधना की तीन अलग–अलग अवस्थाओं में परमेश्वर के मातृ रूप की तीन पृथक–पृथक अभिव्यक्तियाँ होती हैं। पहली अवस्था में साधक का हृदय जन्म–जन्मों के अनेक प्रकार के **मल** (विकारों) से भरा होता है। इस की अभिव्यक्ति साधक के जीवन में काम, क्रोध, लोभ, अहंकार, द्वेष एवं ईर्ष्या के रूप में होती है। ये विकृतियाँ ही प्रतीक रूप से मधु, कैटभ, महिषासुर, शुंभ एवं निशुंभ हैं। माता–दुर्गा की पूजा नवरात्र के आरंभिक दिनों में की जाती है जिससे उपरोक्त विकृतियाँ (असुर) सर्वदा के लिए विनष्ट हो जाय। इस प्रकार माता–दुर्गा परमात्मा का विकराल रूप हैं जिनकी दिव्य शक्तियों से मानवहृदय में अभूतपूर्व प्रेरणा और शक्ति उत्पन्न होती है।

दूसरी अवस्था में माता–लक्ष्मी की पूजा होती है। लक्ष्मी माँ धन और समृद्धि की देवी हैं। ये दिव्य महिमा तथा ऐश्वर्य के प्रतीक हैं। साधना की इस अवस्था

में साधक के व्यक्तित्व में करुणा, वैराग्य, चित्त–शुद्धि, दानशीलता, सार्वभौमिक प्रेम, एकता, उदारता, मानसिक सन्तुलन जैसे दिव्य गुण प्रकट होने लगते हैं। माता–लक्ष्मी द्वारा साधक को प्रदत्त ये अनमोल अध्यात्मिक वैभवों के उपहार हैं। आत्मा को समृद्ध कर देवी लक्ष्मी साधक के चित्त में स्थिरता लाती हैं। इस अवस्था में **विक्षेप** (मानसिक भटकाव) समाप्त हो जाता है।

तीसरी अवस्था में ज्ञान की देवी सरस्वती की पूजा होती है। दुर्गा–माता सिंह पर सवार रहती हैं जो आध्यात्मिक स्तर पर शक्ति तथा बल का प्रतीक है। सरस्वती देवी हंस पर सवार हैं जो ज्ञान तथा विवेक शक्ति का प्रतीक है। दुर्गा देवी अपने हाथों में अनेक प्रकार के अस्त्र–शस्त्र लिए होती हैं जो आरंभिक अवस्था में होने वाले संघर्ष और विनाश का परिचायक है। देवी–लक्ष्मी के हाथों में कमल का पुष्प हुआ करता हं जो आध्यात्मिक विकास तथा दैवीसम्पत्त का प्रतीक है। सरस्वती देवी के हाथों में वीणा इस वात का परिचायक है कि पूर्ण समता तथा सन्तुलन प्राप्त हो गया है जहाँ मन और इन्द्रियों के वेसुरे स्वर के स्थान पर आत्मा के दिव्य संगीत का अनन्त प्रवाह अबाध गति से प्रसारित होने लगा है। सरस्वती देवी अज्ञानावरण को विनष्ट कर चेतना की महिमा को पूर्ण रूपेण प्रकट करती हैं। परमात्मा की परम सुन्दरता की अनुभूति करने से अमरत्व प्राप्त होता है।

अपने हृदय में हमलोग देवी की प्रार्थना करें

''हे माता, आप कब हमलोगों को अपने चरण कमल की भक्ति और जगत से अनासक्ति प्रदान करेंगी?
हमलोग संसार के क्लेशों को कब तक सहते रहेंगे?
आपकी अनन्त माया से हमलोग कब तक भ्रमित होते रहेंगे?
आपको हम सर्वत्र विशेषकर समस्त स्त्रियों में देखें जो आपकी ही विशेष अभिव्यक्तियाँ हैं।
हमारे मन, वचन और क्रियाओं में शुद्धता की सुगन्ध आए!
हमारी कुण्डलिनी को हे माता, जाग्रत करो जिससे कि हम तुम्हें सहस्त्रर तक ले जायें और तुम शिव--परब्रह्म से मिलकर एक बनो।
हे माता, आप शक्ति के सागर हैं।
हमें साधना, चिन्तन, विवेक और शक्ति प्रदान करें जिससे हम आपके साथ एक रूप होकर ब्रह्म में समाहित हो सकें!

अँधकार से प्रकाश की ओर

ऋग्वेद के रात्रि सूक्त में महाकाली

देवी पूजन की विस्तृत व्याख्या देने वाला ग्रन्थ— दुर्गासप्तशती का उद्‌गम स्त्रोत ऋग्वेद का रात्रि सूक्त है। इस सूक्त में रात्रि देवी की स्तुति की गयी है। महर्षि भारद्वाज द्वारा रचित उक्त सूक्त का यहाँ भावार्थ दिया जा रहा है :—

ॐ, सर्वव्यापी देवी ने इस सृष्टि में जीवों की रचना करने के पश्चात उनके कर्मों के फल देने के लिए इस ब्रह्माण्ड को अपने असंख्य वरदानों और महिमा से परिपूर्ण कर दिया। १ ।

यह देवी अमर हैं। वे इस सृष्टि के कण—कण में व्याप्त हैं। वे उर्ध्व दिशा में बढ़ने वाले सांसारिकता के वृक्ष और नीचे की ओर जाने वाली भ्रम की लताओं में विद्यमान हैं। ज्ञान के प्रकाश से वे अज्ञान रूपी अँधकार को समाप्त करने वाली हैं। २ ।

परिशुद्ध चेतना रूपी रात्रि—देवी स्वयं उत्पन्न होने के पश्चात प्रातःकाल की देवी — अपनी बहन — उषा को

प्रकट करती हैं जो अविद्या रूपी अँधकार को विनष्ट करती हैं। ३।

वे रात्रि देवी हम सबों पर प्रसन्न हों। उनके आने से ही हम सभी अपने–अपने घरों में वैसे ही गहरी नीन्द में सोते हैं जैसे पक्षी आनन्द पूर्वक अपने–अपने घोसलों में विश्राम करते हैं। ४ ।

माता की स्नेहिल और प्रेममय गोद में सभी मनुष्य, गाय, घोड़े, आकाश में उड़ने वाले बाज जैसे पक्षी, कीट–पतंग और अन्य प्राणी शान्तिपूर्वक सोते हैं। ५ ।

हे रात्रिदेवी, आप हम सबों पर ऐसी कृपा करें कि हम सभी वासना रूपी मादा भेड़िया (अहंकार और अविद्या पर अवलम्बित सूक्ष्म कामनाय) और पापकर्म रूपी नर भेड़ियों से मुक्त हो जाएं। हमें आप चोर (काम, क्रोध, मोह, लोभ इत्यादि) से छुटकारा दिलाएं और इस संसार–सागर के पार उतार दें। आप मुक्तिदायिनी माता हैं। ६ ।

हे रात की अधिष्ठात्रि देवी–उषा! यह सर्वव्यापी अँधकार हमें चारो ओर से घेरे हुए है। अपने भक्तों का भार हटाने वाली देवी कृपा करके हमें अविद्या (अज्ञान) से मुक्त करें। ७।

हे रात्रि–देवी! आप एक दुधारु गाय (जीवों का पोषण करने वाली) के समान हैं। अपनी प्रार्थना के द्वारा मैं आप की कृपा पाना चाहता हूँ। हे प्रकाशवान आकाश (ब्रह्म का आकाश तत्व) की पुत्री, आप की कृपा से मैंन अपने शत्रुओं (काम, क्रोध, राग–द्वेष इत्यादि) को जीत लिया है। आप मेरी पूजा स्वीकार कीजिए। ८।

प्रतीक अर्थ

वेदों के अति प्राचीन साहित्यों में आध्यात्मिक कल्पना की जो अभिव्यक्ति हुई है वह वास्तव में अद्‌भुत है। जीव की सांसारिकता के इस भयानक जंगल में चल रही जीवन-यात्रा की तुलना एक ऐसे यात्री से की गयी है जो भयानक काली रात्रि में अपने घर से भटक कर एक घन-घोर जंगल में खो गया है।

परन्तु अपने को निगल जाने वाले घन-घोर अँधेरे से भयभीत होने के बदले, उसे एक रहस्यमय अन्तर्दृष्टि प्राप्त होती है। उसे यह अनुभूति होती है कि भयावह अँधकार के पीछे एक ईश्वरीय उद्देश्य है, आधार है। यह अँधेरी रात जहाँ उन लोगों को भयभीत करती है जो यह अनुभव करते हैं कि वे खो गए हैं। सच्चाई यह है कि यह काली रात्रि सभी प्राणियों को विश्राम और शान्ति भी प्रदान करती है। इस अँधेरी रात के कारण ही सभी प्राणी वैसे सो जाते हैं जैसे एक शिशु अपनी माता की गोद में आनन्द पूर्वक सो जाता है।

प्रतीक रूप से अँधेरी रात मायाशक्ति - ब्रह्माण्डीयभ्रम का परिचायक है। माया की अँधेरी रात में सभी जीव घिरे हुए हैं। कर्मों के प्रभाव से उन्हें एक के बाद दूसरा जन्म लेना पड़ता है। इस प्रक्रिया में देवी माँ अज्ञान का रूप धारण कर उन्हें ऋणात्मक रूप से सुख और सहानुभूति प्रदान करती हैं।

जब तक जीव में आध्यात्मिक प्रज्ञा का प्रकाश नहीं प्रकट हो जाता, तब तक व्यक्ति अपने चारो ओर विद्यमान कष्टों और दुःखों से अनजान रहता है। इस प्रकार अविद्या और अज्ञान की शक्तियों का उसकी आध्यात्मिक उन्नति के लिए एक विशेष महत्त्व हो जाता है। जिस प्रकार दुर्बल दृष्टि वालों को रंगीन चश्मा लगा कर अपनी आँखों की रक्षा करनी पड़ती है, वैसे ही देवी भ्रम और अज्ञान के आवरण से अपने बच्चों (जीव) की कोमल दृष्टि को परमात्मा के प्रखर प्रकाश से रक्षा करती है।

जिस प्रकार गहन अँधेरी रात धीरे-धीरे स्वर्णिम प्रभात में बदल जाती है, वैसे ही जब रात्रिदेवी की कृपा प्राप्त हो जाती है तो वे उषादेवी के रूप में स्वयं को प्रकट कर देती हैं।

काली घटायें जो भयानक दीखती थीं, अब प्रकाश के कारण रंगीन वस्त्र धारण कर स्वर्णिम बन जाती हैं। विस्तृत आकाश के इस अनन्त प्रदेश में उषादेवी के प्रभाव से यह कैसा अद्‌भुत रूपान्तरण हो जाता है!

रात्रि सूक्त के भाव ही दुर्गासप्तशती में अभिव्यक्त हैं

दुर्गासप्तशती एक तांत्रिक ग्रन्थ है जिसमें ईश्वर की आराधना माता (शक्ति) के रूप में की गयी है। यह एक गहन ग्रन्थ है जिसमें शक्ति पूजा की विधि बतायी गयी है। इसके साथ ही इसमें रोमांचकारी कथायें भी हैं जिसमें यह बताया गया है कि साधक की आध्यात्मिक प्रगति में आने वाली अनेक राक्षसी बाधाओं को विनष्ट करने के लिए शक्ति कैसे विभिन्न रूप धारण करती है और साधक को आत्मज्ञान की अवस्था तक पहुँचाने के पश्चात कैसे स्वयं परमात्मा (शिव) में मिल जाती हैं।

प्रकृति प्रतिदिन रात के बाद उषाकाल का सृजन कर दिन का स्वर्णिम प्रकाश प्रस्तुत करती है। यही क्रम देवी पूजा की आध्यात्मिक योजना के अन्तर्गत भी अपनाया

जाता है। रात का भयानक अँधियारा तीन अवस्थाओं में व्यतीत होता है:– १. गहन अँधकार जिसका प्रतीक काली या दुर्गा हैं, २. सूर्योदय के पूर्व का उषाकाल जिसका प्रतिनिधित्व देवी लक्ष्मी करती हैं और ३. प्रखर सूर्योदय जिसकी परिचायिका ज्ञान की देवी सरस्वती हैं। इस प्रकार सूर्योदय के बाद साधकों को स्वर्णिम ज्ञान ज्योति तक दिग्दर्शन करने के पश्चात रात्रि देवी स्वयं दृष्टि से ओझल हो जाती हैं मानों वे स्वयं प्रकाश के अनन्त सागर (परमात्मा अथवा शिव) में समाहित हो गयी हों।

इसी प्रकार, आध्यात्मिक पथ पर साधक सर्वप्रथम काम, क्रोध, लोभ, मोह जैसे मलों को विनष्ट करने के लिए देवी माहाकाली की कृपा प्राप्त करता है। तब वह देवीलक्ष्मी की कृपा प्राप्त करने योग्य हो जाता है जो उसके व्यक्तित्व को विभिन्न प्रकार के सद्‌गुण रूपी रत्नों से विभूषित कर देती हैं। इस के कारण उसका अचेतन मन जो पहले कुसंस्कारों की काली घटा से भरा हुआ था, अब अच्छाई, आध्यात्मिक विस्तार और दिव्यगुणों के शुभ संस्कारों से भर जाता है। अब काली भयानक घटाओं का रूपान्तरण उषाकाल की स्वर्णिम और अरुणिमा लिये प्रकाश के देवदूतों के रूप में हो जाता है। रहस्यवादी ग्रन्थों में इसी अवस्था को देवीलक्ष्मी की पूजा के रूप में अभिव्यक्त किया गया है। अन्त में अपने ज्योतिर्मय परिधान में प्रातःकाल की देवी का आगमन हो जाता है जो आकाश में उपस्थित

अँधकार के एक–एक कण को अपने प्रखर किरणों के झाड़ू से बुहार कर दूर कर देती हैं। ठीक ऐसे ही जब कोई साधक चित्तशुद्धि करने के पश्चात् अपने व्यक्तित्व को सद्गुणों से सुशोभित कर लेता है तो उसे बुद्धि का रूपान्तरण अन्तःप्रज्ञा में होने का अनुभव होता है। देवी सरस्वती ही अन्तःप्रज्ञा की ज्योति की मूर्तिमान अभिव्यक्ति हैं। वे ज्ञान प्रदान करने वाली देवी हैं। वे संसार में जो भी सत्य, शिव और सुन्दर है, उन सभी कलात्मक और सृजनात्मक प्रेरणाओं का मूल स्त्रोत हैं। अन्त में प्रातःकाल समाप्त हो जाता है और सबों को प्रकाशित करने वाला पराशक्ति अथवा ब्रह्मन् रूपी सूर्य अपनी समस्त प्रखरता में चमकने लगता है।

इस प्रकार महाकाली के रूप में देवी **मल** को दूर कर महालक्ष्मी के रूप में साधक के व्यक्तित्व को सद्गुणों की दैवी सम्पत्त से विभूषित करती हैं और महासरस्वती के रूप में उसे अन्तःप्राज्ञिक दृष्टि प्रदान कर स्वयं परमब्रह्म परमात्मा में समाहित हो जाती हैं।

माता लक्ष्मी

सर्व व्यापक माता

ईश्वर के मातृ रूप के लिये यह समस्त ब्रह्माण्ड ही क्रीड़ा स्थली है। समस्त सृष्टि में दिव्य माता विद्यमान हैं। वे हमारे अन्तर्मन और चतुर्दिक परिवेश में उपस्थित हैं। वे ज्ञानशक्ति के रूप में हमारी बुद्धि में क्रियाशील हैं। कर्मेन्द्रियों में यही माता क्रियाशक्ति के रूप में कार्यरत हैं।

मूल प्रकृति (सत्व, रज और तम की संतुलित स्थिति), माया, देवी और माता ये सभी एक हैं। माया ब्रह्म से पृथक नहीं हो सकती। देवी पूजा मानव चेतना में जब से माता के प्रति सहज और स्वाभाविक प्रेम की प्रवृत्ति उत्पन्न हुई, उतनी पुरातन है। यह मानव रूप में जब से जीवन धारा चली है तब से चली आ रही है। इस प्रकार की पूजा से व्यक्ति अपने जीवन की प्रत्येक घटना के मूल में देवी की करुण और ममतामयी हाथों को विद्यमान देखता है। देवी

पूजन के द्वारा साधक अपने जीवन की प्रत्येक परिस्थिति का अनुभव एक अलग प्रकार से ही करने लगता है। माता जीवात्मा को भोग और मोक्ष दोनों प्रदान करती हैं।

जो व्यक्ति जीवन के उच्च मूल्यों की ओर आकृष्ट हुए बिना विकास के निम्न सोपान पर स्थित है तथा संसार के नश्वर आकर्षणों में ही उलझा हुआ है, उसके समक्ष देवी कई प्रकार के भ्रामक और विकराल रूपों में प्रकट होती हैं। देवी उन्हें इस प्रकार भ्रमित कर देती हैं कि ऐसे लोग अज्ञानवश यह अनुभव करने लगते हैं कि उनका अशुद्ध और नश्वर शरीर ही शुद्ध तथा शाश्वत आत्मा है। इसके अतिरिक्त उन्हें भ्रम के कारण यह विश्वास रहता है कि यह नश्वर जीवन अमर है तथा संसार का क्षणिक सुख आनन्दमय है। इतना ही नहीं, ऐसे व्यक्ति अपने निष्प्राण मन और बुद्धि को परम चैतन्य आत्मन् मानने लगते हैं। देवी के इस भ्रामक रूप को **अविद्या** कहते हैं।

करुणामयी माता अपने प्रत्येक बालक (जीवात्मा) की पुनःसांसारिक प्रपञ्च से अपने पास वापसी की प्रतीक्षा करती है। यद्यपि देवी की भ्रामक शक्ति का आवेग बहुत प्रचण्ड हुआ करता है फिर भी, प्रत्येक बालक के लिए उनकी करुणा और ममता की अद्भुत धारा भी निरन्तर प्रवाहित होती रहती है। अविद्या–शक्ति का अपना एक विशेष महत्व है। जिस प्रकार मानव की दुर्बल आँखों के लिए सूर्य का

प्रचण्ड प्रकाश हानिकारक है, वैसे ही अल्प विकसित जीवात्मा के लिए भी शाश्वत सत्य का साक्षात्कार अत्यन्त हानिकारक है। सांसारिक प्रपंच के जंगल में चाहे कोई कितना भी क्यों न भटके, परन्तु वह देवी माता से कभी दूर नहीं हो सकता। दयामयी माँ उसे निरन्तर अपनी छाती से लगाये रखती हैं।

माता की गोद में सोया हुआ बालक जब किसी दुःस्वप्न के कारण भयभीत होकर उठने पर अपनी माता का मुस्कुराता मुख मण्डल देखता है तो उसे ऐसा अनुभव होता है कि उसे माँ स्नेहिल थपकियाँ देकर सुलाने का प्रयास कर रही है। परन्तु जब तक वह नीन्द से जगेगा नहीं तब तक उसे इस तथ्य की अनुभूति नहीं होगी। इसी प्रकार प्रत्येक जीवात्मा देवी की करुणामयी गोद में खेल रहा है। देवी माता हमारी सांस और हृदय से भी अधिक समीप हैं क्योंकि मन, बुद्धि, इन्द्रियाँ और शरीर का निर्माण जिन तत्वों से हुआ है, वे देवी के अतिरिक्त और कुछ है ही नहीं। अपने परात्पर रूप में देवी ही ब्रह्मन्–(नाम–रूप और गुण रहित) शाश्वत सत्ता हैं। संसार के दीर्घ स्वप्न के कारण जीवात्मा स्वयं को देवी से अलग अनुभव करता है।

जिनका हृदय शुद्ध है तथा जो सांसारिक प्रपंचों से विमुख हो गये हैं, वैसे अमर साधकों के व्यक्तित्व में देवी का **विद्या** रूप अभिव्यक्त होता है जो ब्रह्म की अद्‌भुत सुन्दरता को प्रकट कर संसार की प्रत्येक वस्तु में उसी (ब्रह्म) की दिव्य गरिमा और भव्यता का दर्शन कराता है।

प्रकृति जिस धैर्य से संसार–स्वप्न में सोई प्रत्येक जीव को जाग्रत करने का प्रयास करती है वह सचमुच अनिवर्चनीय है। धैर्य के सन्दर्भ में 'माता' शब्द से अधिक प्रभावकारी एवं उपयुक्त शब्द और कोई हो ही नहीं सकता। इसलिए शक्ति के लिए साधकों के मन में परमात्मा के प्रति मातृवत् प्रेम एवं सम्मान होता है।

शक्ति उपासना का ही दूसरा नाम देवी पूजा है। शक्ति के अभाव में न तो भोग ही संभव है और न ही मुक्ति। मनःशक्ति शारीरिक शक्ति से श्रेष्ठ है। मनःशक्ति से श्रेष्ठ है बौधिक शक्ति और इससे आत्मिक शक्ति श्रेष्ठ है। इस प्रकार अपने स्वरूप के प्रत्येक स्तर पर देवी का अनुग्रह प्राप्त कर साधक अधिकाधिक शक्तिशाली होता जाता है। आत्मिक शक्ति से विभूषित होकर अन्त में साधक को मुक्ति प्राप्त हो जाती है और वह परमात्मा में समाहित हो जाता है।

देवी भागवत, देवी महात्म्य, मारकण्डेय पुराण और अन्य उपनिषद् जिसमें देवी की महिमा का वर्णन है, उनमें देवी की अनेक कथायें हैं तथा देवी ने असुरों के संहार के लिए जिन–जिन रूपों को ग्रहण किया था, उस पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है। देवी के वरदायक रूप एवं दिव्य स्वभाव का भी उन शास्त्रों में वर्णन किया गया है।

काम, क्रोध, लोभ, अहंकार और अज्ञान जन्य सभी दुर्गुण मानव व्यक्तित्व में छुपी रहने वाली आंसुरी शक्तियाँ

हैं, जिसे शास्त्रों में बडे ही आकर्षक रूप में वर्णित किया गया है। प्रेम, करुणा, धैर्य, शुद्धता, विरक्ति, निर्भयता, त्याग, ज्ञान और विनम्रता मानव व्यक्तित्व में क्रियाशील देवताओं की अभिव्यक्ति है जिसे शास्त्रों ने स्वर्ग में विहार करने वाले आकाशगामी विमान में विचरण करने वाले रूप में प्रस्तुत किया है। ये सभी ज्ञान के प्रकाश से युक्त है।

इन दोनों शक्तियों के संग्राम में सार्वभौमिक माता कैसे हस्तक्षेप कर अँधकार पर प्रकाश की विजय कराती है? देवी की कथाओं में इसकी बड़े ही आकर्षक, प्रतीकात्मक और प्रभावशाली ढ़ंग से व्याख्या की गई है। जिन्हें मानव जीवन और उसके माध्यम से क्रियाशील दिव्य शक्तियों के विषय में थोड़ी भी समझ है, वे कृपालु महर्षियों की अन्तःप्राज्ञिक दृष्टि को देखकर आश्चर्य चकित हो जायेंगे, जिन्होंने अन्यन्त आकर्षक काव्यात्मक शैली तथा रहस्यवादी कल्पनाओं से परिपूर्ण साहित्य के रूप में संसार के समक्ष साधकों के लिए। देवी की अनेक गाथाओं को प्रस्तुत किया है।

ब्रह्माडीय स्तर पर सृष्टि में देवी का अवतार तीन रूपों में होता है। पहला रूप है संहारक, जिसे **दुर्गा** कहा जाता है। दूसरा है, वरदायक जो सुख, समृद्धि देने वाली **लक्ष्मी** है और तीसरा ज्ञान और प्रकाश देने वाली देवी **सरस्वती** हैं। ऐसे ही प्रत्येक व्यक्ति में भी उसकी समस्त आसुरी वृत्तियों को निर्मूल करने तथा समस्त बाधाओं को विनष्ट

करने के लिए दुर्गा देवी, दिव्य गुणों की पुनः स्थापना और विकास के लिए करुणामयी लक्ष्मी और अविद्या के अँधकार को समाप्त कर साक्षात्कार की ज्योति प्रदान करने के लिए सौम्य माता सरस्वती का अवतरण होता है।

आध्यात्मिक दृष्टिकोण से प्रत्येक घटना परमात्मसागर में उठने वाली एक तरंग की तरह है। आत्मनिष्ठा और वस्तुनिष्ठ भाव एक ही परमात्मा के दो अपृथक्य पहलू हैं, जो आत्मज्ञान से प्रकाशित हैं। उनके लिए यह जगत ब्रह्म के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। उनके अन्दर कोई संग्राम नहीं हुआ करता क्योंकि, उनका संकल्प ईश्वरीय संकल्प में समाहित हुआ होता है। उनकी इच्छा ईश्वरेच्छा बन जाती है।

हमलोगों की परिसीमित और अविकसित बुद्धि यदि देवी की अद्‌भुत लीला की सच्चाई में संदेह करती है तो इसका अर्थ यह नहीं कि इन कथाओं की ऐतिहासिकता और प्रामाणिकता को नकारने का अधिकार हमलोगों को है। हमारे जीवन के प्रत्येक पल में माता द्वारा जो चमत्कार हो रहे हैं, उनका एक अत्यन्त छोटे अंश का वर्णन इन लीलाओं में किया गया है। समस्त गरिमा और सुन्दरताओं से भरा यह संसार देवी महिमा का ही प्रतीक है। जब आप में आध्यात्मिक सुग्राहकता जगेगी तो आप अनुभव करेंगे कि माता कितनी महान, दिव्य और सुन्दर हैं!

अब हम लोग देवी की दिव्य और अद्‌भुत क्रियाओं की कथा और उसके गुह्यार्थ प्रस्तुत करेंगे जिससे आप सार्थक रूप से देवी पूजा कर सकें।

माता दुर्गा

देवी कथा का शुभारम्भ

महर्षि मेधा का आश्रम

बहुत प्राचीन बात है। उस समय सुरथ नामक एक बहुत वीर और शक्तिशाली राजा हुआ था। वह अत्यन्त उदार, सदाचारी, कर्तव्य परायण और सत्यवादी था। उसके शासनकाल में कई अन्य शक्तिशाली राजा उसके शत्रु वन गए थे। एक बार सभी राजाओं ने मिलकर सुरथ की राजधानी पर आक्रमण कर दिया तथा उसे चारो ओर से घेर लिया। घनघोर संग्राम छिड़ गया। सुरथ के कई मन्त्री उससे विद्रोह करके शत्रु राजाओं से जा मिले, जिसके कारण उसकी पराजय हुई। इन मन्त्रियों नें राजा के कोषागार से बहुत सारा धन ले लिया तथा राजा के बहुमूल्य ख़जाने पर भी अधिकार कर लिया। अपने प्राण बचाने के लिए राजा सुरथ को जंगल में भागना पड़ा। जंगल में घूमते—घूमते उन्हें मेधा नामक एक महर्षि का आश्रम दिखाई पड़ा।

महर्षि मेधा के आध्यात्मिक प्रभाव के कारण हिंसक पशु अपनी हिंसा–वृत्ति छोड़कर बड़े प्रेम से अन्य जीवों के साथ हिलमिल कर रहते थे। सन्त मेधा ने राजा का स्वागत किया और अपने आश्रम में रहने की अनुमति दे दी। एक दिन उस आश्रम में एक वैश्य आया। राजा ने देखा कि वैश्य को कुछ विशेष प्रकार का दुःख है। अतः उन्होंने वैश्य से अपनी व्यथा बताने का अग्रह किया।

वैश्य ने कहा: "हे राजन! मैं समाधि नामक एक वैश्य हूँ। मेरा जन्म अत्यन्त समृद्ध परिवार में हुआ था परन्तु, ध ान के लोभ के कारण मेरी पत्नी तथा बच्चों ने मुझे घर से निष्कासित कर दिया। इस प्रकार मैं जंगल में भटकता हुआ इस आश्रम में आ पहुँचा हूँ। कई दिन हो गए मुझे अपनी पत्नी, बच्चे, पौत्र और अन्य स्वजनों का कोई समाचार नहीं मिला है। इस कारण मेरा मन दुःख से बिदीर्ण हो रहा है।"

राजा ने कहाः–"हे समाधि, जिन लोगों ने तुम्हें घर से निष्कासित कर दिया उन लोगों के विषय में तुम क्यों इतना चिन्तित हो? क्या यह तुम्हारी मूर्खता नहीं है?" समाधि ने कहाः–"हे राजन्, मुझे अच्छी तरह ज्ञात है कि आप जो कह रहे हैं वह सत्य है। फिर भी मैं उन लोगों के साथ मोह की अदृश्य डोरी से बन्धा हुआ हूँ। मेरा मन अभी आसक्ति के कारण भ्रमित हो रहा है।"

मार्ग दर्शन प्राप्त करने के उद्देश्य से राजा सुरथ और वैश्य समाधि दोनों मेधा ऋषि के पास पहुँचे और उनसे

सांसारिक सम्बन्धों और वस्तुओं से ममता रखने वाले बन्धन को तोड़ने के लिए प्रार्थना किया। ऋषि को नमस्कार करके हाथ जोड़कर उन दोनों ने कहा:–

"हे महर्षि, हम लोगों का भ्रम और मोह दूर कीजिए। मैं राजा हूँ और शत्रु से पराजित होकर जंगल में भटक रहा हूँ। फिर भी, अपने राज्य और राजधानी का मोह छोड़ नहीं पाता। यह समाधि नामक वैश्य अपने परिवार वालों के द्वारा निष्कासित किया गया है।

परन्तु, अब भी इसके मन में उनके प्रति आसक्ति और

मोह वर्तमान है। यद्यपि हम दोनों बुद्धिमान हैं। फिर भी हम लोग ममता की डोर और भ्रम के जाल को तोड़ने में सर्वथा असमर्थ हो रहे हैं।"

ऋषि ने कहाः–"हे राजन, इस विश्व ब्रह्माण्ड में एक आदिशक्ति है, जिसे जगदम्बा कहा जाता है। वे ही लोगों के मन को माया के वशीभूत कर देती हैं। उनकी माया से जब देवता भी परमतत्त्व को जानने में असमर्थ रहते हैं, तो भला मरणशील मानव की बात ही क्या है? देवी प्रकृति के त्रिगुण–सत्त्व, रजस और तमस के माध्यम से प्रकट होकर इस ब्रह्माण्ड का सृजन, संपोषण और विध्वंस करती हैं। देवी को प्रसन्न करने वाले ही भ्रम के इस सागर से पार जा सकते हैं।

देवी की भ्रामक (माया) शक्ति के कारण ही सभी प्राणी इस प्रकार की विचित्र क्रियायें करते हैं। कितना प्रेम और स्नेह से मादा गिद्ध अपने नवजात शिशुओं का पालन–पोषण करती है, परन्तु जब वे बड़े हो जाते हैं तो उनका अपनी माता के साथ कोई लेना–देना नहीं रह जाता। इसी प्रकार माया से भ्रमित मानव राग–द्वेष विकसित कर लेता है, जिस कारण कर्म के बन्धन में उलझकर उसे जन्म–मृत्यु के चक्र में घूमना पड़ता है। परन्तु कर्म की बेड़ियों को तोड़ कर देवी की भ्रामक मायाशक्ति को जीतने की एक दिव्य कला भी है। ऐसा करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को उस देवी की ही शरण में जाना आवश्यक है जिसने उसके समक्ष माया के इस भ्रामक आवरण को फैलाया है।"

प्रतीक अर्थ

सुरथ का शाब्दिक अर्थ है 'जिसका रथ सुन्दर हो।' सुरथ जीवात्मा का प्रतीक है जिसे शरीर रूपी सुन्दर रथ प्राप्त है। जीवात्मा विभिन्न कर्मों और आसक्तियों के कारण इस सांसारिक प्रपंच में उलझा हुआ है। जीवात्मा अपना वास्तविक ब्रह्मस्वरूप भूलकर माया के कारण संसार के भोगों में डूब जाता है।

अनेक जन्म के विभिन्न अनुभवों के बाद इसमें वैराग्य उत्पन्न होता है और इसे अपनी दुःखदायी स्थिति का बोध होता है। इसे इस सत्य की यथार्थ अनुभूति हो जाती है कि संसार के निकटतम सम्बन्धी भी दुःख और कष्ट के क्षणों में सहायता नहीं कर सकते। इस संसार में ऐसा कुछ नहीं है जहां जीव को सच्ची शान्ति और शाश्वत सुख प्राप्त हो सके। हर जगह दुःख और कष्ट का अनुभव करके जीव मेधा ऋषि के आश्रम में आता है। मेधा का शाब्दिक अर्थ है-'परिशुद्ध बुद्धि' अथवा 'अन्तःप्राज्ञिक बुद्धि। जीव अन्तःप्रज्ञा (मेधा) से मार्ग दर्शन प्राप्त करता है।

मन जब विचार तरंगों से पूर्णतः मुक्त हो जाता है तो उस अवस्था को समाधि कहा जाता है। यह जीवात्मा

की वह शक्ति है जिसके द्वारा इन्द्रियों को विषयों से खींचकर अन्तर्मुखी बनाया जाता है। जिस प्रकार वैश्य-गाय पालते तथा उन्हें नियंत्रित करते हैं, वैसे ही समाधि में मन और इन्द्रियों को नियंत्रित करने की शक्ति है। इसलिए इस को वैश्य कहा गया है। जब मन बहिर्मुखी कार्यों में लगा रहता है, तब समाधि की अवस्था छुपी रहती है। मानों मन और विभिन्न विचार तरंगों के रूप में अपने स्वजनों द्वारा समाधि निर्वासित कर दी गई हो।

जब जीवात्मा (राजा सुरथ) तथा समाधि (वैश्य) मिलकर मेधा ऋषि- अन्तःप्राज्ञिक बुद्धि के समक्ष मार्ग दर्शन के लिए जाते हैं, तो उन्हें जगदम्बा का दर्शन होता है, जिसके प्रभाव में उन्हें अपना खोया हुआ साम्राज्य (आत्मसाक्षात्कार) प्राप्त हो जाता है। मेधा ऋषि (या अन्तःप्राज्ञिक बुद्धि) जीवात्मा को आध्यात्मिक संग्राम की विभिन्न अवस्थाओं में मार्ग दर्शन देते हुए इन स्थितियों में सहायता देने वाली विभिन्न शक्तियों के विषय में गहन अन्तर्दृष्टि प्रदान करते हैं। देवी की रहस्यमय और गहन कथाओं में इसी अन्तर्दृष्टि एवं उपदेशों का वर्णन है।

मॉं काली

स्तोत्रम्

ॐ खड्गं चक्रगदेषुचापपरिधान् शूलं भुशुण्डीं शिरः
शंखं सन्दधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वांगभूषावृताम्।
यां हन्तुं मधुकैटभौ जलजभूस्तुष्टावसुप्ते हरौ
नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकाम्।।

"मैं उस महाकाली जिसे मधु और कैटभ के संहार के लिए शेषनाग पर सोये हुए भगवान विष्णु के नाभी कमल से उत्पन्न ब्रह्माजी ने आह्वान किया था। की आराधना करता हूँ, जिन के हाथों में तलवार, चक्र, गदा, तीर, धनुष, शूल, अस्त्र, भाला, मानव खोपड़ी और शंख है। जो त्रिनेत्रा हैं तथा दिव्याभूषणों से सुशोभित हैं, जो नीलमणि के सदृश प्रकाश वान हैं और जिन्हें दस सिर तथा दस पैर हैं। मैं उस देवी को नमस्कार करता हूँ।"

प्रतीक अर्थ

माता काली को सिंह पर सवार दस सिर, दस पैर और बीस भुजाओं वाली देवी के रूप में बताया गया है। वे 'संहारक' रूप में मायाशक्ति का प्रतीक हैं।

साधना-पथ पर यह आवश्यक है कि साधक मन को भ्रमित करने वाले स्थूल विकारों (मल) को समाप्त करे। ये विकार राग (जिसका प्रतीक मधु नामक असुर है) तथा द्वेष (जिस का कैटभ नामक असुर प्रतिनिधि है) की ही विभिन्न अभिव्यक्तियां हैं।

देवी के विभिन्न अस्त्र-शस्त्र इस सृष्टि के निर्माण, पालन और संहार करने के लिए आवश्यक शक्तियां हैं।

तलवार परिशुद्ध मन का परिचायक है। चक्र धर्म है जिस की अधर्म पर विजय सुनिश्चित है। गदा, साधना मार्ग की समस्त बाधाओं को खण्ड-खण्ड कर देता है। धनुष परिशुद्ध चित्त है, जिससे आसुरी शक्तियों को समाप्त करने वाले गत्यात्मक और साकारात्मक विचारों के वाण छूटते हैं। दृढ़ निश्चय ही दण्ड है। शूल अन्तर्दृष्टि है। प्रक्षेपास्त्र अन्तःप्रज्ञा है। मानव खोपड़ी वैराग्य है। और शंख विकसित हो रहे ज्ञान का उदघोष है। देवी के शरीर पर शोभित आभूषण सत्य, शौच,

संतोष, करुणा, ज्ञान, भक्ति जैसे आध्यात्मिक गुणों के प्रतीक हैं जिस से देवी का भक्त साधना के क्रम में विकसित करता हुआ आध्यात्मिक मूल्यों की अमर निधि प्राप्त करता है।

उनके अनेक सिर, पैर और बाहें उनकी असीम शक्ति और सर्वव्यापकता का परिचायक है। देवी के हाथ में मानव खोपड़ी न केवल वैराग्य का प्रतीक है, बल्कि यह भी बताती है कि संसार की समस्त वस्तुयें यहाँ तक कि यह ब्रह्माण्ड भी नश्वर है। इन्हें एक न एक दिन अवश्य विनष्ट होना है।

उनका शरीर नील मणि की तरह चमकता है जो जीव के ''अँधेरी रात'' की अधिष्ठात्रि देवी होने का परिचायक है। उन्हें जब साधना और प्रार्थना से प्रसन्न कर लिया जाता है तो वे जीव को अपने दूसरे सौम्य रूप (लक्ष्मी देवी) और फिर ज्योतिर्मय सरस्वती रूप तक ले जाने में सहायक होती हैं।

दुर्गा के रूप में देवी का प्राकट्य

राजा ने पूछा— "सबों को भ्रमित करने वाली वह देवी कौन हैं? कृपा करके उनकी लीलाओं का वर्णन करें जिसको सुनकर हमें आत्मज्ञान प्राप्त हो।"

मेधा ऋषि ने कहा: "हे राजन्! प्रलय के पश्चात् भगवान विष्णु शेष शय्या पर सो रहे थे। उस समय चारों ओर केवल जल ही जल था। भगवान विष्णु के कानों से मधु और कैटभ नाम के दो भयानक असुर उत्पन्न हुए। उनका शरीर बहुत विशाल था तथा वे सूर्य के समान तेजस्वी थे। वे काल के सदृश भयानक और मृत्यु की तरह डरावने थे। इन दोनों असुरों ने विष्णु की नाभी से निकले कमल के मध्य ब्रह्मा को बैठे देखा। दोनों राक्षसों ने ब्रह्मा के समक्ष आकर गरजते हुए कहा:— "तुम कौन हो?" और उन्हें मारने के लिए दौड़ पड़े।

उन्हें इस प्रकार झपटते देख ब्रह्मा जी भयभीत हो गये। परन्तु उस समय भगवान विष्णु गहरी निद्रा में सो रहे थे। इसलिए अपनी रक्षा के लिए ब्रह्मा जी ने देवी की स्तुति आरम्भ कर दी– "हे जगत् माता, इन राक्षसों को किसी प्रकार भ्रमित करो और भगवान को गहरी निद्रा से शीघ्र जगाओ!"

महादेवी सिंह पर सवार होकर ब्रह्मा के सामने उपस्थित हुई। उनकी अनेक भुजाओं में विभिन्न प्रकार के अस्त्र चमक रहे थे। देवी ने कहा– "हे ब्रह्माजी, भयभीत नहीं होइए। आज मैं इन दोनों राक्षसों का वध करके आपको निर्भय करूँगी।"

देवी का प्रादुर्भाव विष्णु के प्रत्येक अंग से हुआ था देवी के पन्न होने के क्रम में भगवान विष्णु गहरी नीन्द से जग गये। उठने के बाद भगवान ने अपने समक्ष दो भयानक असुरों को देखा। उन्होंने उन असुरों से पाँच हजार दिव्य वर्षों तक युद्ध किया। महामाया–(देवी) के प्रभाव से भ्रमित होने के कारण दोनों राक्षसों ने भगवान विष्णु से कहा– "आपके युद्ध कौशल को देखकर हम अत्यन्त प्रसन्न हैं। हम लोगों से बरदान माँगिए।"

भगवान ने कहाः– "यदि आप लोग सचमुच मुझ पर प्रसन्न हैं तो हमें यही वरदान दीजिए की आप दोनों हमारे हाथों मारे जाएं। दैत्यों ने कहाः– "आप हमें वहीं मार

सकते हैं जहाँ जल नहीं हो।" भगवान बोलेः— "ऐसा ही होगा" और उन दोनों का सिर अपनी जाँघ पर रख कर चक्र से काट दिया।

काली (दुर्गा) देवी की [illegible] यही कथा
यद्यपि देवी का न तो कोई निश्चित रूप है और न ही कोई गुण, फिर भी संसार में धर्म की स्थापना तथा दुष्टों के संहार के लिए वे समय— समय पर विभिन्न रूपों में प्रकट होती हैं। देवी के भक्त उनके प्रत्येक रूप की महिमा का बड़ी श्रद्धा और भक्ति से गुणगान किया करते हैं। वे देवी के दिव्य स्वरूपों का ध्यान कर उनके साथ एकत्व प्राप्त करते हैं। इस प्रकार देवी के भक्त संसार—चक्र से ऊपर उठ कर परमानन्द का रसास्वादन करते हैं।

कथा का प्रतीक अर्थ

देवी के प्राकट्य कथा के आरंभ में भगवान विष्णु की निद्रा इस बात का प्रतीक है कि परब्रह्म परमात्मा सांसारिक प्रपंच से सदा अनासक्त और अछूता रहते हैं। एक मात्र केवल उनकी ही सत्ता है।

प्रलय काल की स्थिति (जब समस्त सृष्टि का लय हो जाता है) में त्रिगुणः— सत्त्व (समता और शुद्धता), रजस (व्यग्र क्रियाशीलता और वासना) तथा तमस (जड़ता और अँधकार) पूर्ण सन्तुलन में रहते हैं।

कथा में जिस अनन्त जल की चर्चा है वह अव्यक्त (कारण तल) सत्ता जिसमें भावी सृष्टि के बीज छुपे रहते हैं का परिचायक है। भगवान विष्णु की शय्या—शेषनाग ब्रह्माण्डीय मन अथवा परमात्मा के अनन्त पहलू का प्रतीक है। शेष नाग के असंख्य फन परमेश्वर की अनन्त शक्ति का परिचायक है।

अपने असंख्य जन्मों में मनुष्य को अविद्या के कारण विभिन्न प्रकार के दुःखों का सामना करना पड़ता है। इन अनुभवों के परिणाम स्वरूप व्यक्ति के मन में राग (आसक्ति) और द्वेष (घृणा) उत्पन्न होता है। इन दोनों को मधु जिसका शाब्दिक अर्थ मीठा और कैटभ (कड़ुआ) नामक असुरों के रूप में इस कथा में चित्रित किया गया है। इन दोनों की उत्पत्ति भगवान विष्णु के कानों से हुयी है, जो इस बात का परिचायक है कि जब व्यक्ति सद्ग्रन्थों के उपदेश सुनने की कला नहीं जानता तो उस के मन पर इन दोनों असुरों का अधिकार हो जाता है।

मन जब इन दो राक्षसों के प्रभाव में आ जाता है तो व्यक्ति अपने अन्दर विद्यमान सृजनात्मक क्षमता को भूल जाता है। ब्रह्माजी का निष्क्रिय रहना इसी तथ्य का परिचायक है। व्यक्ति तब काम, क्रोध, लोभ, मद, मत्सर्य और अन्य आसुरी वृतियों का शिकार हो जाता है।

देवी की उत्पत्ति की इस कथा में मधु (शहद) आसक्ति (राग) का प्रतीक है। कैटभ-द्वेष या घृणा का

परिचायक है। यह द्वेष वृत्ति का अधिष्ठाता है। राग-द्वेष के संस्कार ही पुनर्जन्म के बीज हैं।

साधना की प्रथम अवस्था में इन संस्कारों को समाप्त करना अत्यन्त आवश्यक है। क्योंकि यही भावी जन्मों के बीज है। साधक के जीवन की प्रथम अवस्था में दुर्गा (काली) देवी का विध्वंसात्मक रूप उपस्थित होता है। इस अवस्था में देवी साधक के मार्ग में आने वाली समस्या और विभिन्न प्रकार की बाधाओं को विनष्ट करती हैं। इसलिए देवी को सिंह पर सवार दिखाया गया है जो वीरता और शक्ति का प्रतीक है। देवी के हाथों में अनेक अस्त्र साधकों की सहायता करने वाली विभिन्न आध्यात्मिक शक्तियों के परिचायक हैं, जिनके द्वारा साधक अपने हृदय की विकृतियों (मलों) को समाप्त करता है।

जब काली देवी प्रसन्न होती हैं तो विष्णु भगवान जो सोये हुए थे, जग जाते हैं। यह साधक में रहस्यमयी गुप्त शक्तियों के जागरण का प्रतीक है। इस प्रकार जगकर साधक की जीवात्मा मलों (मधु और कैटभ) के साथ लम्बे समय तक संघर्ष करती है और अन्त में उन्हें विनष्ट कर विजय प्राप्त करती है। राग और द्वेष पर विजय एक अद्भुत आध्यात्मिक प्रक्रिया का परिचायक है जिसकी अन्तिम परिणति संसार चक्र की समाप्ति के साथ आत्मज्ञान की प्राप्ति में सन्निहित है।

इस तथ्य को अच्छी तरह समझ लेना है कि कोई व्यक्ति अपनी परिसीमित शक्ति से इन मलों को पूरी तरह समाप्त नहीं कर सकता। उसे सांसारिक स्तर (जल) से ऊपर उठना आवश्यक है। वह परिशुद्ध चित्त का स्तर है जिसे भगवान विष्णु की जाँघ के रूप में इस कथा में प्रस्तुत किया है। यहाँ अविद्या की अँधियारी आसुरी शक्तियों को अन्तप्रज्ञा के प्रकाश (भगवान विष्णु का चक्र) के द्वारा समाप्त कर दिया जाता है।

माया शक्ति के अभाव में ब्रह्मन राग-द्वेष को समाप्त नहीं कर सकते। बिना इन्हें विनष्ट किये कोई साधक आध्यात्मिक मार्ग पर प्रगति नहीं कर सकता।

विष्णु, शाश्वत और सनातन परमात्मा हैं तथा देवी उनकी माया शक्ति। जिस प्रकार उष्मा और अग्नि तथा शीतलता और बर्फ को एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। वैसे ही, ब्रह्म और माया को पृथक नहीं किया जा सकता है। जिस प्रकार बिना गरमी के अग्नि क्रियाशील नहीं हो सकती, उसी प्रकार देवी (माया) के बिना भगवान विष्णु भी कोई कार्य नहीं कर सकते। इस प्रकार माया-शक्ति की महत्ता को स्पष्ट रूप से समझ लेना अत्यन्त आवश्यक है।

माया-शक्ति के प्रति भक्ति विकसित करके उनकी सर्वव्यापक सत्ता के समक्ष समर्पण द्वारा भक्त आध्यात्मिक प्रगति के गुह्य रहस्यों को सीखता है। माया की वही भ्रामकता अब मुक्तिदायी शक्ति बन जाती है। और अविधा की अँधियारी रात्रि का रूपान्तरण ज्योतिर्मय स्वर्णिम प्रकाश में वैसे ही होने लगता है जैसे रात के बाद उषा का आगमन होता है।

इस प्रकार द्वंद्व और दुःखों के बीच साधक देवी की उपस्थिति का अनुभव करता है। इस बार जब यह चेतना जग जाती है तो उसके हृदय में एक अद्‌भुत आनन्द का सागर लहरा ने लगता है। क्यों कि माता के भयानक मुखौटे के पीछे छुपे हुए सौम्य और कृपालु आँखों का वह दर्शन कर लेता है।

मधु और कैटभ के विनाश का अर्थ है साधक के अचेतन से राग- द्वेष के संस्कार की समाप्ति। इसको आध्यात्मिक भाषा में ब्रह्मग्रन्थि (जो मणिपुर चक्रनाभी में स्थित है) का भेदन कहा जाता है। इन संस्कारों के समाप्त होते ही साधक में वैराग्य का उदय होता है। वेदान्त के अन्य ग्रन्थों में इसे कर्मग्रन्थि भी कहा गया है। मधु और कैटभ के वध से साधक परमेश्वर के सत्

स्वरूप की अनुभूति कर लेता है। इस अवस्था में कुण्डलिनी मणिपुर चक्र भेद कर ऊपर के चक्रों की ओर चढ़ने के लिए तैयार रहती है।

देवी की उत्पत्ति की कथा का यही संक्षिप्त प्रतीकात्मक अर्थ है। इस कथा पर ध्यान और चिंतन करने से साधक अपनी इच्छानुसार भोग और मोक्ष प्राप्त करता है। माता दुर्गा हम सबों के मार्ग की समस्त बाधायें दूर करें।

काली या दुर्गा देवी को प्रसन्न करने का मंत्र है—

"नमश्चण्डिकायै"

ॐ यैं हूं क्लिं चामुण्डयै विच्चै

इस मंत्र का गुह्यार्थ इस प्रकार है

"हे देवी, आप सच्चिदानन्द की जीवन्त प्रतिमूर्ति हैं। परमज्ञान के इच्छुक हम सभी आपका ध्यान करते हैं। हे चण्डिका देवी, जो महाकाली, महालक्ष्मी और महा सरस्वती के रूप में प्रकट होती हैं, आपको नमस्कार है। आप अविद्या की बेड़ियों को दूर कर मुक्ति प्रदान करें

ॐ श्री दुर्गा यै नमः

महालक्ष्मी

महालक्ष्मी ध्यान स्तोत्रम

ॐ अक्षस्रक्परशुं गदेषुकुलिशं पद्म धनुष्कुण्डिकां
दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनं ।
शूलं पाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननां
सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ।।

"मैं कमल पुष्प पर आसीन उस देवी लक्ष्मी का ध्यान करता हूँ, जो प्रसन्न मुख, महिषासुर संहारणी और अपनी (अठारह) भुजाओं में माला, कुल्हाड़ी, गदा, वाण, वज्र, कमल, धनुष, घड़ा, दंड, भाला, तलवार, ढ़ाल, शंख, घन्टा, सुरापात्र, त्रिशूल, पाश और सुदर्शनचक्र धारण किये हुए हैं।"

प्रतीक अर्थ

विक्षेप (मानसिक बिखराव अथवा चंचलता) को ही महिषासुर के रूप में चित्रित किया गया है। कमल का आसन क्रमिक विकास का परिचायक है। महालक्ष्मी के प्रकट होते ही साधक अपने मन की चंचलता (विक्षेप) जिनकी जड़ें अचेतन में वासना के रूप में अवस्थित रहती हैं, को जीतना आरंभ कर देता है। तब कमल पुष्प के सदृश दिव्य क्षमतायें व्यक्तित्व में प्रस्फुटित होने लगती हैं।

उनकी अनेक भुजायें असंख्य शक्तियों की परिचायक है। माला भक्ति का प्रतीक है। कुल्हाड़ी वह ज्ञान है जिसकी सहायता से साधक सांसारिकता के वृक्ष को काट डालता है। गदा, पवित्रता की शक्ति है जिसकी सहायता से साधक आध्यात्मिक पथ की समस्त बाधाओं को चूर-चूर कर देता है। देवी के बाण की तरह मन से शुद्ध विचारों के बाण उत्पन्न होते हैं जिसकी सहायता से मन में उठने वाली निम्न और कष्टदायक वृत्तियों को समाप्त कर दिया जाता है।

साधक की अडिग निष्ठा और श्रद्धा देवी का बज्र है। सद्गुणों की उत्पत्ति कमल पुष्प के समान क्रमशः प्रस्फुटित होती है। परिशुद्ध चित्त धनुष है जिससे वाणों की तरह शक्तिशाली विचार निकलते हैं। अचेतन मन के शुभ संस्कारों

का प्रतीक घड़ा है। देवी के हाथों का दण्ड विवेक का परिचायक है जो बुद्धि को विशेष प्रकार की शक्ति से सम्पन्न कर देता है। शक्ति (अथवा भाला) वह क्षमता है जो चित्त में स्थित ऋणात्मक और दुर्गुणों को समाप्त कर देती है।

देवी की तलवार मन के भ्रमों को समाप्त करती है और ढ़ाल,भक्तों को आसुरी शक्ति (अंधकार) से रक्षा करती है। शंख आध्यात्मिक क्षमता को जागृत करने वाला है, जबकि घन्टा आध्यात्मिक अन्तर्दृष्टि को प्रकट करता है। सुरापात्र में समाधि का आनन्द भरा रहता है। त्रिशूल (दिक्काल और कारण) से निर्मित इस सापेक्षिक जगत को समाप्त करता है। पाश आसुरी गतिविधियों को रोकता है और सुदर्शनचक्र सभी पापों के मूल-अविद्या को काट देता है।

महालक्ष्मी का प्राकट्य

अति प्राचीन काल में महिषासुर नामक एक दैत्य बहुत प्रभावशाली हो गया था। ब्रह्मा ने उसे वरदान दिया था कि वह किसी स्त्री द्वारा ही मारा जा सकता है। महिषासुर को यह भ्रम था कि उसने अमरत्व प्राप्त कर लिया है। क्योंकि, वह कल्पना भी नहीं कर सका था कि विश्व में ऐसी कोई भी महिला होगी जो उसे मार सके।

स्वर्ग के राजा इन्द्र थे। एक बार सौ दिव्य वर्षों तक देवासुर संग्राम चलता रहा। इस संग्राम में असुर विजयी हुए और महिषासुर इन्द्र को अपदस्थ कर स्वयं ही स्वर्ग का राजा बन गया।

अपनी हार के पश्चात् सभी देवता प्रजापति (सृष्टिकर्ता ब्रह्मा) के नेतृत्व में भगवान विष्णु और महेश के पास पहुंचे। उन लोगों ने महिषासुर, देवासुर संग्राम और उसमें हुई अपनी अपमान जनक पराजय की सम्पूर्ण गाथा उन दोनों को सुनाई। देवताओं ने यह भी बताया कि कैसे महिषासुर, सूर्य, चन्द्र, अग्नि, वायु, वरुण, यम और अन्य सभी देवताओं को उनके अधिकार और कार्यों से हटाकर स्वयं सारे कार्य

मनमानी ढंग से कर रहा है। महिषासुर के आतंक से कैसे सभी देवता पृथ्वी पर मनुष्यों की तरह इधर–उधर भटक रहे हैं। अपनी करुण कथा सुनाकर सभी देवता परमात्मा के चरणों में विनीत भाव से समर्पित हो गये। उनकी कथा

सुनकर मधुसूदन भगवान विष्णु और भगवान शंकर ने क्रोध रूप धारण कर लिया। उनका चेहरा लाल हो गया तथा भौंहें क्रोध से तन गई। उस समय महादेव शिव और भगवान विष्णु के शरीर से बहुत बड़ा प्रकाश पुँज प्रकट हुआ। वह ज्योति शीघ्र ही एक स्त्री रूप में बदल गयी। वे ही महालक्ष्मी बनीं। देवी के दिव्य स्वरूप से धरती और आकाश में सर्वत्र प्रकाश फैल गया। इस देवी का मुखमण्डल भगवान शिव के तेज से बना था। यम के तेज से देवी के काले–काले बाल निर्मित हुए। भगवान विष्णु के प्रकाश से देवी की भुजाएँ बनी। इस प्रकार प्रत्येक देवता के प्रकाश के मिलने से इस प्रकाश पुँज महालक्ष्मी का अंग–प्रत्यंग बना।

चूँकि महादेवी की उत्पत्ति सभी देवताओं के अंश से हुई थी, इसलिए समस्त देवताओं की शक्ति उस देवी में क्रियाशील हो रही थी। देवी का उत्कृष्ट रूप देख कर सभी देवता अति प्रसन्न हो गये। देवी को उस समय तक कोई अस्त्र नहीं था। भगवान शिव ने उन्हें अपना त्रिशूल दिया। भगवान विष्णु ने उन्हें अपना चक्र दिया। वरुण ने अपना पाश, अग्नि ने शक्ति (भाला), वायु ने धनुष और बाणों से भरा दो तरकस, इन्द्र ने गदा, यम ने मृत्यु–दण्ड, ब्रह्मा ने कमण्डलु, सूर्य ने देवी के अंग–अंग में अपनी तेज

महिषासुर संहार

जब महादेवी ने महिषासुर की सेना को मार डाला तब चामर, उदग्र तथा अन्य प्रमुख सेना–नायकों ने देवी से भयंकर युद्ध आरम्भ कर दिया। सारा वातावरण आयुधों की टंकार, अस्त्रों की टकराहट, सिंहों की गर्जना और हताहत हो रहे असुरों की चित्कार से भर गया। अधिकांश असुरों के मारे जाने के पश्चात यद्यपि संग्राम तो समाप्त हो गया, परन्तु महिषासुर फिर भी बचा हुआ था। महिषासुर एक विशाल हाथी के रूप में बदल गया। उसकी चिघाड़ से धरती और स्वर्ग प्रकम्पित हो उठा। अपने सिंह के साथ देवी उस पर टूट पड़ी।

शीघ्र ही वह अपने स्वाभाविक महिष रूप में आ गया। जब वह दूसरा रूप लेना चाह रहा था कि देवी ने अपनी शक्ति (भाला) से उसकी छाती में प्रहार किया। फिर अपनी तलवार से उसका मस्तक काट दिया। उसकी शेष सेना सहायता के लिए चिल्लाती हुई इधर–उधर भाग गई।

महिषासुर के संहार के बाद संसार में सुख शान्ति आ गई। मधुर वायु बहने लगी, गन्धर्वों ने गाना आरम्भ किया तथा अप्सरायें नाचने लगी। महालक्ष्मी के प्राकट्य की यही संक्षिप्त कथा है।

किरणें और पर्वतराज हिमालय ने वाहन सिंह, देवी को प्रदान किया। अन्य देवता और दिव्य आत्मायें (सिद्ध) देवी को अनेकानेक आभूषण, रत्न, पुष्प और अस्त्र प्रदान किया।

इसके पश्चात् देवी ने जोरों का अट्टाहास किया और भयंकर गर्जना की। उनकी गर्जना इतनी तीव्र थी कि समस्त दिशाओं में प्रतिध्वनित हो गई। सागरों ने अपनी मर्यादा छोड़ दी, पृथ्वी काँपने लगी तथा देवता लोग उल्लास से "देवी की जय" ध्वनि करने लगे।

महर्षियों, सिद्धों और देवताओं ने देवी की स्तुति की। जब महिषासुर और उसके सेना नायकों ने इस अद्‌भुत ध्वनि को सुना तो वह अपनी सेना के साथ शस्त्र उठाए उस स्थान की ओर दौड़ा जहाँ से वह ध्वनि आ रही थी। उन लोगों ने देखा कि देवी अपने प्रकाश से तीनों लोक को प्रकाशित कर रही है। ताम्र, उग्रस्य, विडाल, चिक्षुर, चामर, उदग्र, कराल, दुर्धर, दुर्मुख, त्रिनेत्र, महाहनु, अन्धक, उद्धत, दुर्धन जैसे प्रमुख असुरों के अतिरिक्त असंख्य अन्य राक्षस देवी से युद्ध करने की इच्छा से उनकी ओर दौड़ पड़े। वे सभी राक्षस युद्ध कौशल में प्रवीण और महाबली थे।

देवी और असुरों के साथ घनघोर युद्ध आरंभ हो गया। असुरों ने असंख्य अस्त्रों से देवी पर आक्रमण कर दिया। जिस प्रकार दावानल से विशाल जंगल जल कर भस्म हो जाता है, वैसे ही देवी के द्वारा छोड़े गये शक्तिशाली अस्त्रों से महिषासुर की विशाल सेना विनष्ट हो गयी।

प्रतीक अर्थ

देवता और असुरों का संग्राम प्रत्येक व्यक्ति के मन में निरन्तर सत् और असत् शक्तियों के पारस्परिक संघर्ष का प्रतीक है। काम, क्रोध, लोभ-अभिमान, द्वेष, ईर्ष्या ये ही मानव व्यक्तित्व की आसुरी शक्तियां हैं। निर्भयता शुचिता, विनम्रता, सार्वभौमिक प्रेम, अहिंसा, सन्तोष, निरभ्रता और अन्य सद्‌गुण मानव व्यक्तित्व में स्थित देवताओं के परिचायक हैं।

इसके पूर्व अध्याय में हम लोग मधु और कैटभ नामक दैत्य जो व्यक्तित्व की स्थूल विकृति (मल) -राग तथा द्वेष के रूप में अभिव्यक्त हैं के वध के विषय में पढ़ चुके हैं।

अब भी राग-द्वेष की सूक्ष्म और गहरी जड़ें नहीं समाप्त हुई हैं। मल और उसके अनेक रूपों के विनाश से साधक में प्रखर वैराग्य उत्पन्न होता है। परन्तु, अपने हृदय की सूक्ष्म वासनाओं और विकृतियों को दूर करने के लिए उसे और संघर्ष तथा प्रयत्न करना शेष है।

महिषासुर मन की विक्षेप शक्ति का प्रतीक है जिसके कारण मन व्यग्र तथा चंचल रहता है। परिणाम स्वरूप जीवात्मा अपने यथार्थ स्वरूप की अनुभूति नहीं कर पाती।

इसके अतिरिक्त विक्षेप शक्ति जब समाप्त हो जाती है तो साधक का व्यक्तित्व निर्भयता, सन्तोष, आन्तरिक शान्ति, मुदिता, विनम्रता, करुणा जैसे अन्य सद्‌गुणों (दैवी सम्पत्त) से विभूषित हो जाता है। इस प्रकार देवीलक्ष्मी साधक के

मानसिक को विनष्ट कर उसे दिव्य वैभव और अनमोल आध्यात्मिक समृद्धि प्रदान कर देती हैं।

महिषासुर, चिक्षुर, चामर, उदग्र और अन्य असुर राजसिक शक्तियां हैं जो विक्षेप, आवरण, दर्प, भय, आडम्बर, लोभ, मोह, इन्द्रिय-दासता और अन्य दुर्गुणों के प्रतीक हैं।

देवी के प्रादुर्भाव की कथा बहुत महत्वपूर्ण है। सभी देवताओं की आन्तरिक और मूलभूत शक्ति ही देवी हैं। इनके बिना कोई भी देवता क्रियाशील नहीं हो सकते। इसलिए देवी का प्राकट्य सभी देवताओं के अंश से हुआ है।

हृदय की दूसरी ग्रन्थि को काम ग्रन्थि कहा जाता है। इससे व्यक्ति का मन विक्षिप्त रहता है। व्यक्ति का वास्तविक स्वरूप एक अज्ञानावरण में छुपा रहता है तथा उसकी बुद्धि भ्रमित रहती है। जिसके कारण यथार्थ ज्ञान नहीं प्राप्त होता। महिषासुर के संहार के साथ ही यह ग्रन्थि विनष्ट हो जाती है। महिषासुर के रूप में रजस की समाप्ति पर साधक परमात्मा के चित्त (चेतना) पक्ष की अनुभूति कर लेता है। इस ग्रन्थि को विष्णु ग्रन्थि भी कहा गया है और यह अनाहत चक्र (हृदय) में रहती है।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है महिषासुर की सेना रजस की विभिन्न शक्तियों का परिचायक है। रजस के समाप्त होते ही मन को विक्षिप्त करने वाली सूक्ष्म वासनायें विनष्ट हो जाती हैं। परिणामतः व्यक्ति भौतिक वस्तुओं की आसक्ति से मुक्त हो जाता है। उसका पथ निर्विघ्न हो जाता है। उन्नत भाव की मधुर वायु मन्द-मन्द बहने लगती है। हृदयाकाश प्रज्ञा प्रकाश से प्रदीप्त हो जाता है।

❋ ❋ ❋

महालक्ष्मी की महिमा

भयानक असुर महिषासुर के विनाश को देखकर इन्द्र तथा दूसरे देवता अत्यधिक प्रसन्न हुए। हृदय में अतुलित भक्ति और श्रद्धा भर कर सभी देवताओं ने भगवती की स्तुति की।

देवताओं ने कहाः– 'हे देवी, आपकी शक्ति से ही ब्रह्मा संसार की सृष्टि करते, विष्णु पालन करते तथा रूद्र संहार करते हैं। यदि आपकी शक्ति इन्हें प्राप्त न हो तो ये अपने निर्धारित कार्यों को पूरा नहीं कर सकेंगे। इसलिए हे देवी, वास्तव में इस ब्रह्माण्ड के रचइता, पालन कर्ता और संहार कर्ता आप ही हैं।

कीर्ति, मति, स्मृति, गति, करुणा, दया, श्रद्धा, धृति, वसुधा, कमला, अजपा, (सोहम् मन्त्र) पुष्टि, कला (किरण कास एक विजया (विजय) गिरिजा, जया, तुष्टि, प्रमा, बुद्धि, उमा, रमा, विद्या, क्षमा, कान्ति (सुन्दरता) और मेधा (परिशुद्ध बुद्धि) ये सब आपके अनेक नाम हैं।

इन शक्तियों के अभाव में तीनों लोकों में ऐसा कोई नहीं है जो कोई भी कार्य पूरा कर सके। हे दवी! निश्चित ही आप एक मात्र जगत् धात्री हैं। आपके बिना महान

शेषनाग भी अपने हजार फणों पर इस पृथ्वी को उठाने में असमर्थ हैं। आपने असुरों का संहार करके देवताओं की रक्षा की है। आपने संसार की एक बहुत बड़ी बाधा को समाप्त कर दिया है। आपका यश सर्वत्र फैल गया है। हे देवी! प्रसन्न होइए और हम सबों को आशीर्वाद दीजिए!''

देवताओं की इस प्रार्थना से देवी अत्यन्त प्रसन्न हुई और उनसे कहा: 'देवताओं! मैं आप सबों से अत्यन्त प्रसन्न हूँ। आपकी जो इच्छा हो वह वरदान माँगिए। आप लोगों की समस्त कामनायें पूर्ण होगी।''

देवताओं ने कहा:– 'हे माता! अपने चरण कमल में अविचल भक्ति का वरदान दीजिए। आपने हम लोगों को वह सब कुछ प्रदान किया है जिसके हम लोग वास्तव में योग्य नहीं हैं। आपने हम लोगों के सबसे बड़े शत्रु जो हम लोगों से कभी मारा नहीं जा सकता था, को विनष्ट कर दिया है। हे देवी! कृपा करके हम लोगों को यह वरदान दीजिए कि जिस प्रार्थना से हम लोगों ने अभी आपकी अर्चना की है उसका भक्ति भाव से पाठ करने वाले की आप समस्त मनोकामनायें पूर्ण करेंगी तथा सुख, समृद्धि और शान्ति के अतिरिक्त निर्वाण प्रदान करेंगी।''

देवी ने कहा:– 'देवताओं! ऐसा ही होगा। आपकी इच्छायें पूर्ण होंगी। जब आप लोगों पर कोई विपत्ति आये हमारा स्मरण कीजिए। मैं आप लोगों के समस्त कष्टों को दूर कर दूँगी।'' ऐसा कहकर देवी अन्तर्ध्यान हो गई।

प्रार्थना का प्रतीक अर्थ

देवताओं की प्रार्थना में देवी की महिमा और इसके स्वरूप का वर्णन है। देवी ही समस्त ब्रह्माण्ड की मूलभूत वास्तविकता-सत् हैं। वे ही समस्त सृष्टि के सार हैं। हम लोगों ने पहले पढ़ा है कि कैसे व्यक्तित्व की स्थूल विकृति- मल के प्रतीक-मधु और कैटभ नामक असुरों का विनाश देवी की प्रेरणा और शक्ति से भगवान विष्णु ने किया। मल के समाप्त होते ही कुण्डलिनी मणिपुर चक्र में स्थित ब्रह्मग्रन्थि का भेदन करती है तथा साधक अहंकारिक स्तर पर स्वयं को कर्मों में संलग्न नहीं करता है। अर्थात उसकी कर्मग्रन्थि समाप्त हो जाती है।

आध्यात्मिक विकास की दूसरी अवस्था में साधक काम ग्रन्थि (सूक्ष्म वासना अथवा इच्छा) के रूप में सूक्ष्म अवरोध का सामना करता है। रजस प्रकृति (बहिर्मुखी वृत्तियां) का अधिष्ठाता महिषासुर जो विक्षेप, आवरण और अनेक प्रकार की गुप्त तथा अदृश्य बुराइयों के कारण बलशाली बना था, देवी द्वारा मारा गया। इस प्रकार उर्ध्वमुखी होती कुण्डलिनी शक्ति अनाहत चक्र में स्थित विष्णु ग्रन्थि (या काम ग्रन्थि) का भेदन कर लेती है।

जब देवी ने महिषासुर को विनष्ट किया तो देवता आनन्दित हुए थे। इस अवस्था की विजय में साधक

चेतना के उच्चस्तरों में प्रवेश पाने में सफल हो जाता है और कुण्डलिनी गले में स्थित विशुद्धि चक्र तथा भ्रूमध्य स्थित आज्ञा चक्र की ओर उठने लगती है। महिषासुर के मरते ही साधक के व्यक्तित्व में रजस प्रभावहीन हो जाता है। उसका मन बहिर्मुखी नहीं होता और उसे अनन्त शान्ति और आनन्द का अनुभव होता है।

राजयोग में सानन्द समाधि का वर्णन है। इस अवस्था में मन सात्त्विक स्पन्दनों से परिपूर्ण रहता है तथा निम्न मन् के द्वारा प्रस्तुत सभी अवांछनीय अवरोधों पर पूर्ण विजय प्राप्त कर लेने के पश्चात एक अद्‌भुत आनन्द का अनुभव होता है। प्रशान्त हृदय में आत्मानन्द प्रतिबिम्बित होने लगता है। इसी अवस्था को देवताओं द्वारा देवी की स्तुति के पश्चात् अभिव्यक्त प्रसन्नता और आनन्द के रूप में चित्रित किया गया है।

काम (वासना, सूक्ष्म इच्छा) के विनष्ट होते ही साधक के व्यक्तित्व में जो धनात्मक (शुभ गुण) तत्व हैं उनका पूर्ण विकास होने लगता है। साधक के व्यक्तित्व में मुदिता, मैत्री, करुणा, अहिंसा और अन्य दैवी सम्पत्त अपनी पूर्ण गरिमा के साथ विकसित हो जाते हैं।

गहन संघर्ष की स्थिति समाप्त होते ही अद्‌भुत आध्यात्मिक समृद्धि और असीम प्रशान्ति का उदय होता है। यह देवी लक्ष्मी की कृपा का ही परिणाम है। दुर्गा देवी द्वारा साधक के पथ से स्थूल विघ्नों की समाप्ति के पश्चात् लक्ष्मी देवी उसके व्यक्तित्व को दिव्य गुणों के

आभूषणों से विभूषित करने के साथ-साथ उसे भौतिक और आध्यात्मिक समृद्धि से परिपूर्ण कर देती हैं। वासनाक्षय (काम की समाप्ति) व्यक्ति की आत्मा में छुपे अनमोल खजाने को खोलने की अद्भुत कुञ्जी है।

महालक्ष्मी की कृपा प्राप्त करने का मन्त्र है –

ॐ श्रीं महालक्ष्म्यै नमः।
ॐ श्रीं ह्रं क्लिं यैं कमलवासन्यै स्वाहा।
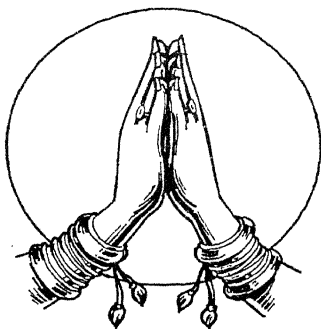
माँ सरस्वती

महासरस्वती ध्यान स्तोत्र

ॐ घण्टाशूलहलानि शंखमुसले चक्रं धनुःसायकं
हस्ताब्जैर्दधर्ती घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम् ।
गौरीदेहसमुभ्दवां त्रिजगतामाधारभूतां महा-
पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम् ।।

मैं सदा महासरस्वती का ध्यान करता हूँ जो अपने (आठ) कमलवत् हाथों में घन्टा, त्रिशूल, हल, शंख, गदा, चक्र, धनुष और बाण धारण करती हैं। (मैं उस देवी का ध्यान करता हूँ) जिनकी अप्रतिम सुन्दरता शरद्कालीन रात्रि में चमकते पूर्णीमा के चन्द्र के समान है, जो त्रिलोकों को धारण करती हैं, जिन्होंने शुंभ-निशुंभ के साथ असंख्य दैत्यों का विनाश किया है और जो देवी गौरी के शरीर से उत्पन्न हुयी हैं।

प्रतीक अर्थ

देवी सरस्वती अन्तःप्राज्ञिक ज्ञान के प्रतीक हैं जो अविद्या के दो पहलू "मैं" और "मेरा पन" के भाव को

समाप्त करता है। शुंभ और निशुंभ दो राक्षस व्यक्तित्व में विद्यमान इन्हीं दो पक्षों के परिचायक हैं।

देवी का घन्टा आध्यात्मिक अन्तर्दृष्टि के प्रकट होने का प्रतीक है। उनका त्रिशूल इस जग को आबद्ध करने वाले दिक्काल और कारण इन तीन परिसीमाओं को विनष्ट करने वाला है। उनका हल अचेतन मन को जोत कर उसमें शुभ संस्कारों का बीजारोपण करता है। शंख दिव्य शक्ति के जागरण का परिचायक है। आध्यात्मिक मार्ग पर आने वाले अवरोधों को तोड़ देने के प्रतीक रूप में देवी की गदा है। चक्र वह आध्यात्मिक दृष्टि है जिससे अविद्या के राक्षस कट जाते हैं।

आत्मज्ञानी संतों का परिशुद्ध चित्त ऐसे धनुष के समान है जिससे शक्तिशाली विचारों के वाण का संधान कर आसुरी शक्तियों का विनाश और दैवी सत्ता की स्थापना की जाती है। भगवान शिव की प्रिया पार्वती (गौरी) के शरीर से देवी का प्रकट होना इनकी सर्वोच्च अभिव्यक्ति का द्योतक है।

जिस प्रकार शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा का विकास तीन चरणों में होता है, वैसे ही देवी स्वयं को तीन अवस्थाओं - महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती के रूप में प्रकट करती हैं। अन्तिम अभिव्यक्ति बादल रहित स्वच्छाकाश में पूर्णिमा के चन्द्रमा की तरह अलौकिक और दिव्य हैं।

महासरस्वती का प्राकट्य

महर्षि मेधा ने कहा–"अति प्राचीन काल में शुम्भ निशुंभ नामक दो महादैत्य अत्यन्त शक्तिशाली हो गये थे। इन दोनों भाइयों के अत्याचार से तीनों लोक में त्राहि–त्राहि मच गई तथा देवताओं को भय के कारण हिमालय स्थित देवी की शरण लेनी पड़ी। देवी को प्रसन्न करने के लिए देवताओं ने इस प्रकार स्तुति की:

"उस देवी को बार–बार नमस्कार है जो इस समस्त सृष्टि में विष्णु माया के नाम से विख्यात हैं। उन्हें पुनः पुनः प्रणाम है"।

उस महादेवी को बार–बार नमन् है जो समस्त प्राणियों में बुद्धि के रूप में जानी जाती हैं। हमारा उस देवी को बार–बार नमस्कार है।

उस देवी को बार–बार नमन है जो समस्त जीवों में भूख के रूप में जानी जाती हैं। ऐसी देवी को पुनः पुनः प्रणाम है।

उस देवी को बार–बार नमस्कार है जो समस्त प्राणियों में छाया, तृष्णा, शक्ति, क्षमा, लज्जा, कृपा, श्रद्धा, सुन्दरता,

समृद्धि, प्रयास, स्मृति, संतोष और माता के नामों से जानी जाती हैं तथा जो सबों का एकमात्र आधार है। हम लोगों का ऐसी देवी के श्री चरणों में बारम्बार नमस्कार है।"

पार्वती देवी जब गंगा में स्नान करने जा रही थीं तो उन्होंने देवताओं को स्तुति करते देखा।

उन्होंने देवताओं से पूछा:– "आप लोग किसकी स्तुति कर रहे हैं?"

उमा देवी के शरीर से एक दिव्यमान ज्योति स्वरूप अत्यन्त सुन्दर देवी प्रकट हुई। उसने शिव प्रिया उमा देवी से कहा:–हे देवी, ये देवता मेरी स्तुति कर रहे हैं। क्योंकि ये सभी शुम्भ–निशुंभ के अत्याचारों से पीड़ित हैं तथा अपनी रक्षा के लिए प्रार्थना कर रहे हैं।''

चूँकि इस देवी का प्रादुर्भाव उमा देवी के शरीर से हुआ था, इसलिए इनका कौशिकी नाम विख्यात है। वास्तव में ये ही शुम्भ निशुंभ का संहार करने वाली महासरस्वती थीं। इन्हें उग्रतारा और महातारा भी कहा जाता है। इस देवी ने देवताओं से कहा:– ''देवताओं! आप सभी निर्भय हो जाएँ। मैं निश्चय ही इन दैत्यों का संहार करूँगी।''

जब पार्वती देवी से सरस्वती निकल आयी तो पार्वती का रंग काला हो गया और उनके इसी रूप को कालिका देवी कहा जाने लगा।

बाद में शुम्भ निशुंभ के दो सेवक जिनका नाम चण्ड और मुण्ड था घूमते हुए उस स्थान पर आये जहाँ अत्यन्त प्रकाशवान सरस्वती देवी भ्रमण कर रही थी। उन दोनों ने देवी का अत्यन्त मनोहारी रूप–लावण्य देखा।

इन दोनों ने जा कर शुम्भ निशुंभ से इस प्रकार कहाः—हे महाराज, हम लोगों ने हिमालय में अतिशय रूपवती एक सुन्दरी को विहार करते देखा है। सचमुच उसकी सुन्दरता के समान इस त्रिलोकी मे कोई स्त्री नहीं हो सकती। वह सिंह पर सवार हिमालय में यत्र—तत्र भ्रमण कर रही है। महाराज, आपके पास इस सृष्टि में जो भी सर्वश्रेष्ठ है, वह सब कुछ है। अतः यह अतुलनीय सुन्दरता वाली स्त्री भी आपके पास होनी चाहिए। इसलिए आप उसे अपनी सेविका बनाइए।''

यह सुनकार शुम्भ ने अपने दूत सुग्रीव को आदेश दिया कि उस स्त्री को समझाकर शीघ्र उसके पास लाए।

दूत हिमालय में भ्रमण करती हुई देवी से मिला और इस प्रकार कहाः—हे देवी, इस तीनों लोक में शुम्भ अपनी वीरता और प्रभुता के लिए प्रसिद्ध है। उसने आपके लिये इस प्रकार संदेश भेजा हैः— "मैंने इन्द्र को पराजित कर दिया है। अन्य सभी देवताओं को भी पदच्युत कर यज्ञ में उन सबों का अंश स्वयं ग्रहण करता हूँ। चूँकि मैं जानता हूँ कि आप स्त्री रत्नों में सर्वश्रेष्ठ हैं, इसलिए मैं चाहता हूँ कि आप हमें अथवा मेरे भाई दोनों में से किसी एक को अपना पति स्वीकार कर लें।"

यह सुनकर महादेवी ने कहाः— "दूत, तुमने जो भी कहा है वह सब सत्य है। मुझे तुम्हारी बातों में कोई शंका नहीं है। परन्तु बहुत पहले मैंने यह प्रतिज्ञा की थी कि जो भी हमारे अभिमान को तोड़ देगा और हमें युद्ध में पराजित

करेगा मैं केवल उसी से ब्याह करूँगी। तुम हमारी इस प्रतिज्ञा की सूचना शुंभ और निशुंभ को दे दो और उन्हें जो उचित लगे वैसा करने दो।"

धूम्रलोचन का संहार

सुग्रीव नामक दूत शुम्भ के पास आकर देवी ने जो कुछ कहा था उसे सुना दिया। शुम्भ अत्यन्त क्रोधित होकर अपने वीर सेनापति धूम्रलोचन को बुलाकर कहाः– "हिमालय में एक अत्यन्त सुन्दर स्त्री भ्रमण कर रही है, उसे जैसे भी तुम उचित समझते हो वैसे पकड़ कर शीघ्र हमारे पास लाओ। यदि वह संग्राम करना चाहे तो उसे पराजित कर यहाँ लाओ।" शुम्भ की आज्ञा पाकर धूम्रलोचन देवी से मिलने चल पड़ा। हिमालय में अत्यन्त तेजस्वी देवी को देखकर उसने कहाः– "हे देवी, मेरे साथ आप हमारे स्वामी के पास चलें। यदि आप स्वेच्छा से नहीं चलेंगी तो आपको बलपूर्वक ले चलूँगा। मैं साठ हजार वीर योद्धाओं के साथ आप को लेने आया हूँ।"

देवी ने कहाः–"मैं जानती हूँ कि असुरों के राजा ने तुम्हें मुझे लेने के लिए भेजा है। यदि तुम हमें बलपूर्वक ले जाना अथवा मारना चाहोगे तो मैं क्या कर सकती हूँ? परन्तु जब तक तुम मुझे पराजित नहीं कर दोगे तब तक मैं तुम्हारे साथ नहीं जा सकती।"

धूम्रलोचन ऐसा सुनकर देवी को पकड़ने के लिये दौड़ पड़ा। परन्तु, महादेवी ने केवल 'हूँ' ध्वनि की और वह

जलकर भस्म हो गया।

इसके बाद असुरों की विशाल सेना अनेक अस्त्र–शस्त्रों के साथ देवी पर टूट पड़ी। परन्तु देवी के सिंह ने उनमें से अधिकांश का काम तमाम कर दिया। शेष सेना भाग गई और धूम्रलोचन के वध का समाचार शुम्भ और उसके भाई निशुंभ को दिया।

इस समाचार से शुम्भ अत्यन्त क्रोधित हो गया। उसने चण्ड–मुण्ड को बुलाकर कहाः–"महावीरों, उस स्त्री के पास जाओ और उसके बाल पकड़ कर खींचते हुए यहाँ लाओ। अपने साथ विशाल सेना ले जाओ। यदि तुम उसे यहाँ नहीं ला सको तो उसे वहीं मार कर वापस लौट आओ।"

चण्ड–मुण्ड संहार

शुँभ निशुँभ के आदेशानुसार चण्ड और मुण्ड एक विशाल सेना लेकर देवी से मिलने गए। उन दोनों ने हिमालय में देवी के दिव्य और प्रखर स्वरूप को देखा। अपने अस्त्र उठाये वे दोनों असुर देवी को पकड़ने के लिए उनकी ओर बड़ी तेजी से दौड़े। देवी ने थोड़ा क्रोध करते हुए उन्हें वक्र भौंहों से देखा। उनकी भृकुटि से एक अत्यन्त काली देवी प्रकट हुई जिन्हें कालिका देवी कहा जाता है।

कालिका देवी ने बाघाम्बर धारण कर रखा था तथा उनके गले में नर मुण्डों की माला सुशोभित हो रही थी। उनका रूप बहुत भयानक था। उनका शरीर अत्यन्त

दुबला पतला था। परन्तु उनकी आँखें अँगारे की तरह लाल थीं। देवी ने बड़े जोर से गर्जना करते हुए असुरों के साथ घनघोर युद्ध किया। अन्त में देवी ने चण्ड मुण्ड को रणभूमि में मार डाला।

रक्तबीज संहार

शुँभ को जब पता चला कि चण्ड मुण्ड को देवी ने मौत की गोद में सुला दिया है तो वह अत्यन्त क्रोधित हो गया। उसने अपनी समस्त सेना को देवी से युद्ध करने का आदेश दिया। विभिन्न वंशों के वीर असुरों को देवी से युद्ध करने के लिए भेजा गया।

इन असुरों में जो प्रमुख थे उनके नाम इस प्रकार हैं– उदायुध, कांबु, कोटि वीर्य, दौभ्र, कालक, मौर्य, दौर्हद और कालकेय इन लोगों के साथ देवी से संग्राम करने के लिए शुँभ स्वयं चल पड़ा। अपनी तरफ विशाल सेना को आती देखकर देवी चण्डिका ने भयानक गर्जना किया। उनके साथ–साथ उनका वाहन सिंह भी बहुत जोरों से गरजने लगा।

इस भयानक गर्जन को सुनकर असंख्य असुरों ने देवी को चारो ओर से घेर कर उन पर हमला कर दिया। उस समय सभी देवों की शक्तियाँ अपने–अपने वाहन पर चढ़ आगय विष्णु की शक्ति वैष्णवी गुरुड़ पर चढ़ कर, महेश्वरी शिव की शक्ति बाध पर चढ़ कर, ब्रह्माणी ब्रह्म की शक्ति हंस पर संवा हो कर, ऐन्द्री इन्द्र की शक्ति कात्तीकेय की शक्ति मोर पर चढ़ कर नारसिंही, वाराही और अन्य देवी रूप में

प्रकट होकर चण्डिका देवी की सेवा में आ गई। इस प्रकार देवी ने असुरों के विरुद्ध घमासान युद्ध आरंभ कर दिया और जैसे तूफान के समक्ष बादल समाप्त हो जाते हैं, वैसे ही वे असुरों का नाश करने लगी।

आसुरी सेना से तब एक भयानक राक्षस निकला जिसे रक्तबीज कहा जाता था। उसे आश्चर्यजनक शक्ति प्राप्त थी।

रक्तबीज नामक महासुर ने जब देखा कि राक्षस सेना भाग रही है, तो वह देवी से युद्ध करने आ गया। शिव की आराध ाना करने से उसे यह शक्ति प्राप्त थी कि पृथ्वी पर गिरी हुई उसके शरीर की प्रत्येक रक्त की बूँद से उसी ही समान एक असुर उत्पन्न हो जाएगा।

देखते–देखते हजारो की संख्या में रक्त बीज जैसे असुर उत्पन्न हो कर अपने विमान से युद्ध देख रहे देवताओं को भयभीत करने लगे। वे देवतामन ही मन यह सोच रहे थे कि देवी असंख्य असुरों को कैसे समाप्त कर सकेंगी? जब देवी ने रक्तबीज के समान अनेक असुरों को उत्पन्न होते देखा तो उन्होंने कालिका देवी से अपनी जीभ लम्बी कर रक्तबीज के शरीर से निकली प्रत्येक बूँद को पी जाने को कहा।

एक तरफ कालिका देवी अपना मुँह बढ़ा कर रक्तबीज का रक्त पान कर रही थीं, तो दूसरी ओर अन्य देवियाँ अनेक अस्त्रों से असुरों का संहार करती जा रही थीं। पृथ्वी पर गिरने के पूर्व रक्त पी लेने से नए रक्तबीज की उत्पत्ति नही हुई। अतः केवल मूल रक्तबीज ही बचा रहा। अन्त में भयानक असुर रक्तबीज भी मारा गया। इससे देवताओं में प्रसन्नता फैल गयी तथा खुशी से देवियाँ नृत्य करने लगीं। जो असंभव प्रतीत हो रहा था, वह देवी की अनन्त शक्ति से संभव हो गया।

प्रतीक अर्थ

द्वैत भाव ही असुर (दैत्य) के अस्तित्व का आधार है। यह भाव अविद्या के कारण उत्पन्न होता है। अहंता और ममता (मैं और "मेरापन" का भाव) अविद्या की दो प्रमुख अभिव्यक्तियाँ हैं।

अहंता ही असुर शुँभ है। विवेक के अभाव के कारण ही अहंता बनी रहती है। शुँभ सभी दैत्यों का राजा है। अहंकार निरन्तर ममता के साथ ही रहता है। अर्थात शुँभ हमेशा अपने छोटे भाई निशुंभ के साथ रहता है। इन दोनों को अलग नहीं किया जा सकता है। जहाँ अहंता है वहीं ममता भी है।

इन दो प्रमुख दैत्यों की सेवा में असुरों की विशाल सेना है जो अप्रबुद्ध मन में उठने वाली असंख्य वृत्तियों का परिचायक है। शुँभ- निशुँभ के सेवकों में चण्ड और मुण्ड प्रमुख हैं। चण्ड-प्रवृत्ति (क्रिया) और मुण्ड, निवृत्ति (निष्क्रियता) का परिचायक है। प्रवृत्ति और निवृत्ति इन दो मानसिक वृत्तियों पर अहंता और ममता टिकी रहती है।

प्रवृत्ति और निवृत्ति हानिकारक और सहायक दोनों हो सकती हैं। जब इनका निर्देशन अहंता

(शुंभ)द्वारा होता है तो प्रवृत्ति के कारण कर्म-बन्धन अधिक सुदृढ़ हो जाता है और निष्क्रियता से मन की मूढ़ावस्था बढ़ती है।

धूम्रलोचन विपर्यय (विकृत अथवा गलत ज्ञान) का परिचायक है। देवी द्वारा केवल 'हूँ' ध्वनि के हुँकार से ही विपर्यय समाप्त हो जाता है। देवी के अनेक रूप एवं अभिव्यक्तियाँ साधना पथ पर परमात्मा की ओर चलने वाले साधकों के विकास क्रम की विभिन्न अवस्थाओं में प्रकट होने वाली आध्यात्मिक शक्तियों का प्रतीक है।

असुरों के आठ वंश जीवात्मा को बाँधने वाले आठ बन्धन हैं। घृणा, लज्जा, जुगुप्सा, शंका, भय, कुल, शील और जाति ये आठ बन्धन हैं। उदायुद्ध, कम्बु, कोटिवीर्य, धौम्र, कालक, दौहृद, मौर्य, कालकेय ये असुरों के आठ वंशों के परिचायक हैं।

जब जीवात्मा इन आठ बन्धनों से मुक्त हो जाता है तो वह देवी के साथ एक हो जाता है। जब तक अहंता है तब तक ब्रह्माण्डीय माता नहीं प्राप्त हो सकती। जो उन्हें युद्ध में पराजित कर उन के समतुल्य हो जाता है, वही उन्हें प्राप्त कर सकता है। मन और इन्द्रियों को नियंत्रित करने के लिए साधना एक संग्राम है।

रक्तबीज व्युत्थान (मन की बहिर्मुखी वृत्ति) का प्रतीक है। इसके प्रभाव में मन समाधि के आनन्द को भूल कर वाह्य जगत की ओर आकृष्ट होता है। देवी की लम्बी जिह्वा परमात्मा की ओर निरन्तर प्रवाहित होने वाली ब्रह्माकार वृत्ति

(मन की अन्तःप्राज्ञिक स्थिति) का प्रतीक है। ब्रह्माकार वृत्ति से मन को बहिर्मुखी बनाने वाला मूल कारण ही विनष्ट हो जाता है।

अपने मन को अन्तर्मुखी करने के लिए साधक कठिन संघर्ष करता है। कभी-कभी उसे ऐसा प्रतीत होता है कि उसने अपनी वहिर्मुखी वृत्तियों को रोकने में सफलता प्राप्त कर ली है। परन्तु यदि इस वृत्ति का लेशमात्र भी उसके अचेतन मन में विद्यमान है, तो उसका मन पुनः वर्हिमुखी हो जाता है। शीघ्र ही उस का मन काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार और घृणा जैसी अनेक कुवृत्तियों से भर जाता है, जैसे रक्त बीज की एक-एक बूँद से असंख्य असुर उत्पन्न हो जाते हैं। साधक को तब क्या करना चाहिए? उसका निरूत्साहित होना स्वाभाविक है।

परन्तु, जब साधक अपने अन्तर्मन में अवस्थि परमेश्वर स्वरूप माता के प्रति समर्पित हो जाता है, तो वह शास्त्रों के उपदेशों और शिक्षाओं पर चिन्तन-मनन करने लगता है। तब उस की मानसिक रणभूमि में सद्गुणों पर अवलम्बित शुद्ध संस्कारों के रूप में देवी की अनेक अभिव्यक्तियां प्रकट हो जाती हैं, जो उसके अचेतन में विद्यमान अशुभ संस्कारों के रूप में उपस्थित असंख्य असुरों का संहार कर देती हैं। देवी द्वारा प्रक्षेपित वाण और अन्य अस्त्र-शस्त्र सद्ग्रन्थों के उपदेश हैं जो दुर्गुणों और दृवृत्तियों के असुर को विनष्ट कर देते हैं।

देवी की विशाल जिह्वा ब्रह्माकारवृत्ति —(मनकी अन्तः प्राज्ञिक क्रिया) है जो निरन्तर परमात्मा की ओर प्रवहित

होती रहती है। साधक में यह अन्तर्दृष्टि उत्पन्न हो जाती है कि चाहे उसका मन कही भी क्यों न चला जाए, देवी की लपलपाती जीभ उसकी वर्हिमुखी वृत्तियों को चाट कर समाप्त कर देगी। उस में यह ज्ञान पूर्णतः स्थिर हो जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति, वस्तु और घटना के पीछे ब्रह्मन् के अतिरिक्त और किसी का अस्तित्व नहीं है। इस प्रकार के अन्तःप्राज्ञिक ज्ञान से उसकी वर्हिमुखता निष्प्रभावी हो जाती है।

धीरे-धीरे व्युत्थान (वहिर्मुखी) संस्कार कम होते-होते समाप्त हो जाते हैं। इस प्रकार आत्मसाक्षात्कार के रूप में अन्तिम विजय के लिए रक्तबीज रूपी अविद्या का नाश हो जाता है। वहिर्मुखी वृत्ति का नाश ब्रह्माण्डीय उत्सव का अवसर होता है। क्योंकि अन्तर्मुखी अथवा अन्तःप्रज्ञिक मन समस्त सृष्टि के लिए जो भी शुभ, सत्य और कल्याणकारी है, वैसे कार्यों का सतत स्त्रोत बन जाता है।

देवी की कथा की इस स्थिति तक कुण्डलिनी अनाहत (हृदयकेन्द्र) भेद कर विशुद्धिचक्र (ग्रीवा) में पहुँच गई होती है तथा विशुद्धिचक्र से ऊपर अब आज्ञाचक्र में प्रवेश करती है, जहाँ रूद्रग्रन्थि (या अविद्या ग्रन्थि) स्थित है। यहीं शुंभ निशुंभ का किला है, अर्थात अहंता एवं ममता का मूल यहीं विद्यमान रहता है।

देवी की इन कथाओं के माध्यम से व्यक्ति के हृदय की अनन्त गहराई में चलने वाले आध्यात्मिक संग्राम का प्रतीकात्मक वर्णन किया गया है। व्यक्तित्व में असुर बहुत सूक्ष्म रूप में विद्यमान रहते हैं। परन्तु देवी की शक्ति उनसे

भी गहन और सूक्ष्मतम है।

उमा देवी से कौशिकी या सरस्वती देवी की उत्पत्ति गहन आध्यात्मिक संघर्ष की स्थिति में साधक की चेतना में सर्वोच्च रूपान्तर का परिचायक है। अहंता और ममता का प्रतीक शुंभ-निशुंभ के संहार के पश्चात साधक को अमरत्व और परमानन्द प्रदान करने के लिए महासरस्वती देवी साधक की चेतना की सर्वोच्च अभिव्यक्ति है।

महासरस्वती देवी हम सबों पर प्रसन्न हों तथा जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्ति के रूप में जीवन की सर्वोच्च सफलता प्रदान करें।

सरस्वती देवी को प्रसन्न करने का मन्त्र
ऐं सरस्वत्यै नमः है–

निशुम्भ संहार

महर्षि मेधा ने कहाः– "हे राजन, जब शुम्भ को चण्ड, मुण्ड तथा रक्तबीज के मारे जाने की खबर मिली तो वह अत्यन्त क्रोधित हो गया। अपने भाई निशुम्भ और शेष राक्षसी सेना को साथ लेकर वह स्वयं देवी से युद्ध करने चल पड़ा। जिस प्रकार जलती आग में कीड़े झुलस ने के लिए निकल पड़ते हैं, वैसे ही आसुरी सेना नगर से बाहर निकल पड़ी। क्रोध से पागल हो रहे राक्षस अपने आने की सूचना ढ़ोल, नगाड़े और मृदंग बजाकर देने लगे।

समस्त आकाश धूल और बादलों से इस प्रकार आच्छादित हो गया कि सूर्यदेव का रथ भी उसमें ढ़क गया। रथ, हाथी, ऊँट और घोड़ों पर सवार असंख्य योद्धाओं के साथ अनगिनत पैदल सिपाही चल रहे थे। राक्षसों की अति विशाल सेना को आते देख जगद्जननी जगदम्बा अपने हाथों में धनुष और बाण लेकर तैयार हो गई। असुरों को निरूत्साहित करने के लिए देवी ने घण्टा बजाया तथा उनके वाहन–सिंह की गर्जना से आकाश और पाताल कम्पित हो गया।

देवी की अद्‌भुत शोभा देखते ही निशुम्भ मोहित होकर मधुर वाणी में कहाः– "हे कोमलांगे, आपका शरीर भयानक युद्ध करने के लिए नहीं बना है। आप पुष्पों से भी अधिक सुकोमल हैं! आप यह भयंकर लड़ाई कैसे लड़ सकती हैं?" चण्डिका देवी ने कहाः– "भ्रम और मोह में पड़े असुर! ऐसी मूर्खता भरी बातें नहीं करो। अभी या तो मुझ से संग्राम करो या पाताल लोक में भाग कर छुप जाओ।"

यह सुनते ही राक्षसराज निशुम्भ क्रोध से लाल हो गया! उसने पहले तो देवी पर बाणों की वर्षा कर दी। उसके बाद भाला, त्रिशूल, तलवार तथा अन्य अस्त्रों से देवी को मारने का प्रयास करने लगा। भयानक संग्राम छिड़ गया। खून की नदियाँ बह चली। सिर रहित राक्षसों के असंख्य धड़ नाचते दिखाई पड़ने लगे। संग्राम भूमि में कोहराम मच गया। अनेक हाथी, घोड़े तथा ऊँटो की मृत्यु हो गई और शेष घायल होकर रणभूमि से भागने लगे।

अहंकारी निशुम्भ ने अपनी गदा से देवी के वाहन सिंह को मारना चाहा। ऐसा करने से पहले देवी ने कहा:– "दुष्ट राक्षस, तुम्हारा सिर अभी तलवार से काट रही हूँ। अब तुम्हारा अन्त समय आ गया है।" ऐसा कह कर देवी ने अपनी तलवार से निशुम्भ का सिर धड़ से अलग कर दिया और वह भयानक राक्षस कटे हुए पेड़ की तरह धरती पर गिर पड़ा। निशुम्भ की मृत्यु के बाद सेना में कोहराम मच गया। सभी रोने चिल्लाने लगे। शेष सेना रोती चिल्लाती शुम्भ के पास चली गई जो रक्तबीज के मरने के बाद अपने महल में वापस आ गया था। उन लोगों ने शुम्भ से उसके भाई निशुम्भ वध की सारी बाते कह सुनाई।

शुम्भ सहार

शुम्भ ने जब अपने भाई की मृत्यु का समाचार सुना तो उसने देवी के साथ युद्ध करते हुए अपने प्राणों की बलि देने का निश्चय कर लिया। अपनी बिखरी हुई सेना को पुनः एकत्रित करके वह देवी की ओर चल पड़ा। उसने तीनों लोक की समस्त सुन्दरताओं का सार समेटी हुयी देवी के दिव्य रूप को पर्वत–शिखर से देखा। उस समय महादेवी अपने सर्वोत्तम सौंदर्य एवं भव्यता से सुशोभित हो रही थीं। उनके शरीर पर अलौकिक आभूषण शोभायमान थे। देव, यक्ष, गन्धर्व और

किन्नर देवी के चरणों पर पारिजात पुष्प करते हुए उनकी आराधना कर रहे थे।

शुम्भ ने सोचा "देवी कितनी भव्य और महान हैं! अभी–अभी उन्होंने यौनावस्था में प्रवेश ही किया है। उनका शरीर एक ओर तो पुष्पों से भी सुकोमल है तथा दूसरी ओर युद्ध में हीरे से भी कठोर हो जाता है। देवी में ये दोनों परस्पर विरोधी गुण समान रूप से विद्यमान हैं। उनको पराजित करने के लिए हमें कौन सा मार्ग अपनाना चाहिए? यदि वे मुझ पर प्रसन्न हो जाती हैं तो मैं धन्य हो जाऊँगा। मेरे सामने केवल एक ही रास्ता है, चाहे तो मैं उन्हें युद्ध में पराजित कर दूँ अथवा लड़ते–लड़ते युद्ध में उनके हाथों मारा जाऊँ"। ऐसा सोच कर शुम्भ ने महाकाल की तरह युद्ध भूमि में आकर खड़ा हो गया।

उसने कहाः– "हे देवी, मुझ से युद्ध करो। यद्यपि स्त्री से युद्ध नहीं करना चाहिए। फिर भी तुम्हारी बुद्धि कालिका ने अपने परामर्श से भ्रष्ट कर दी है। रणभूमि में शंखनाद करने के बदले तुम्हें वीणा से सुमधुर संगीत गाना चाहिए। तुम्हारी सुन्दर आकृति और आकर्षक यौवन युद्ध भूमि के लिए नहीं बने हैं। यदि तुम्हारे दाँत बड़े होते, बड़े नाखून, बिल्ली की आँखों की तरह पीली आँखें, लम्बे पैर और कुरूप आकृति होती तो तुम्हारे साथ युद्ध करने में मुझे आनन्द आता।"

राक्षस को सम्मोहित और आसक्त होते देख कर देवी ने मुस्कुराते हुए कहाः– "मूर्ख, व्यर्थ के वार्तालाप में समय नहीं

नष्ट करो। यदि तुम मुझ से युद्ध नहीं करना चाहते तो चामुण्डा या कालिका देवी से युद्ध करो। मैं केवल इस युद्ध का निरपेक्ष द्रष्टा रहूँगी।" ऐसा कहते हुए देवी ने कालिका से कहा: "कालिके, इस राक्षस का तत्काल संहार करो।"

कालिका देवी साक्षात काल रूपणी थीं। उन्होंने अपनी गदा से शुम्भ के रथ को तोड़ डाला। फिर शुम्भ ने कालिका देवी के वक्ष पर अपनी गदा से प्रहार किया। कालिका ने उस गदा प्रहार को रोक कर अपने हाथों में एक तलवार लिया और राक्षस का बायां हाथ काट डाला। शुम्भ अपने दाहिने हाथ में तलवार लेकर कालिका देवी पर टूट पड़ा। परन्तु कालिका ने उसके पैरों को काट दिया। केवल उसका धड़ ही बचा रहा। फिर वह अत्यन्त जोर से भयानक गर्जन करने लगा जिसे सुनकर देवतागण भी आतंकित हो गए। तब कालिका देवी ने उसका सिर धड़ से अलग कर दिया।

शुम्भ के मारे जाते ही देवगण अत्यन्त प्रसन्न हो गए। अग्नि अपनी प्रचण्ड प्रखरता से प्रजवलित होने लगी। देवी की पूजा करने के पश्चात् शेष राक्षस पाताल में चले गए। सभी नदियों का जल पवित्र एवं शान्त हो गया। ठंढी और सुगन्धित वायु मन्द–मन्द बहने लगी। आकाश धूल एवं बादल रहित हो गया। देवता तथा ऋषि निर्भय होकर अपनी साधना और यज्ञ करने लगे। सर्वत्र सुख, शान्ति और समृद्धि फैल गई।

प्रतीक अर्थ

जैसा कहा जा चुका है कि साधना पथ में साधक की प्रगति को रोकने वाली दो प्रमुख बाधायें- अहंता और ममता हैं। शुम्भ और निशुम्भ व्यक्तित्व में वर्तमान इन्हीं दो वृत्तियों के प्रतीक हैं। इन बाधाओं को आज्ञाचक्र में स्थित रूद्र ग्रन्थि (अथवा अविद्या ग्रन्थि) के भेदन से ही दूर किया जा सकता है।

ज्योतिर्मय आत्मन् और चित्त (जिसमें यह ज्योतिर्मय आत्मन् प्रतिबिम्बित होता है) इन दोनों में भेद नहीं समझने के अभाव में अहंता का उदय होता है। अविद्या के कारण जीव स्वयं को मन से पृथक करने में असमर्थ रहता है। राजयोग में इसे ही अस्मिता क्लेश कहा गया है।

अस्मिता अथवा अहंता को विवेकख्याति (अर्थात आत्मा के विषय में अन्तःप्राज्ञिक ज्ञान) के द्वारा समाप्त किया जाता है। साधक जब सानन्द एवं सस्मित समाधि (ब्रह्माण्डीय मन से सम्बन्धित समाधि) में पूर्णतः प्रतिष्ठित हो जाता है तो उसकी बुद्धि का रूपान्तरण अन्तःप्रज्ञा में हो जाता है। वह स्वयं को चित्त से पृथक आत्मा के रूप में देखने लगता है।

परन्तु इस अन्तःप्राज्ञिक दृष्टि के अभाव में अहंकार चित्त के प्रति यह भाव निर्मित करता है कि चित्त मेरा है। इसकी अभिव्यक्ति इस प्रकार होती है:- "यह मन मेरा है। अतः

मन से जो भी सम्बन्धित है वह सब हमारा है। शरीर, प्राण, इन्द्रियां ये सभी हमारे हैं। मित्र, सम्बन्धी, भौतिक वस्तुयें सभी हमारे हैं।" ममता की यह भावना ही शुम्भ का छोटा भाई निशुम्भ है।

चण्ड और मुण्ड के संहार के साथ ही क्रियाशीलता के सन्दर्भ में जो भ्रम और संशय रहता है वह विनष्ट हो जाता है। रक्तबीज के वध के पश्चात् मन की बहिर्मुखी वृत्तियाँ समाप्त हो जाती हैं तथा एकाग्र मन पूर्णतः परमेश्वर में लग जाता है। निशुम्भ संहार का अर्थ है ममता को निर्मूल होना। शुम्भ संहार अहंता (मैंपन का भाव) की समाप्ति का प्रतीक है। इसके साथ ही अविद्या का मूल ही समाप्त हो जाता है।

देवी का स्वामी कोई नहीं बन सकता। जिस प्रकार से लवण निर्मित गुडिया सागर की गहराई नापने के बदले उसी में घुल जाएगी, वैसे ही कोई शुम्भ देवी को अपने अधिकार में नहीं कर सकता। क्योंकि, अहंकार कभी आत्मसाक्षात्कार नहीं प्राप्त कर सकता है। जब अपने निम्न स्वरूप को उच्च स्वरूप में समाहित कर दिया जाता है, तभी आत्मसाक्षात्कार सम्भव है। ज्ञान की वेदी पर जब तुच्छ 'मैं' की बली दे दी जाती है तभी ब्रह्माण्डीय 'मैं' की प्राप्ति होती है।

दिक्काल से सीमित संसार में अन्य उपलब्धियों की तरह आत्मसाक्षात्कार कोई भौतिक उपलब्धि नहीं है। यदि यह

किसी अन्य वस्तुओं की तरह होता तो एक न एक दिन अवश्य विनष्ट अथवा खो जाता। आत्मसाक्षात्कार परमात्मा की आन्तरिक अनुभूति है, जो अज्ञान तथा इसकी प्रमुख अभिव्यक्तियाँ -अहंता और ममता (शुम्भ-निशुम्भ) के संहार के पश्चात् ही संभव है।

अहंता का किला आनन्दमय कोश अथवा कारण शरीर है। निम्न समाधि की अवस्था में साधक सूक्ष्म शरीर में प्रवेश करता है। सानन्द और सस्मित समाधि की अवस्था में योगी कारण शरीर अथवा चित्त की अन्तिम गहराई में प्रवेश करता है। कुण्डलिनी आज्ञाचक्र का भेदन कर सिर के सर्वोच्च स्थान पर स्थित सहस्त्रार चक्र में चली जाती है। इस अवस्था में योगी को समाधि की सर्वोच्च अवस्था- असम्प्रज्ञात समाधि प्राप्त होती है, जहाँ उसके सभी संस्कार (कर्मों के बीज) दग्ध हो जाते हैं और जीव परमात्मा में मिल जाता है।

देवी की यह कथा साधक के कारण शरीर में चलने वाले संग्राम का प्रतीक है। कुण्डलिनी जब आज्ञाचक्र का भेदन कर लेती है तो अरुणोदय की तरह साधक के मन में विवेकख्याति का उदय होता है।

देवी के द्वारा जो विभिन्न प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग हुआ है, वे उपनिषदों के मन्त्र के परिचायक हैं। प्रत्येक मन्त्र देवी का ऐसा वाण है जो व्यक्ति के मन में रहने वाली आसुरी वृत्तियों का विनाश करता है। देवी के चार महान, अस्त्र चार वेदों और चार महावाक्यों के परिचायक

हैं। चारो महावाक्य इस प्रकार हैं:- प्रज्ञानांम् ब्रह्म- ब्रह्म ही परम परिशुद्ध चेतना है। तत्वम्ऽसि -तुम वही ब्रह्म हो। अहम् ब्रह्मास्मि- मैं ब्रह्म हूँ। अयम् आत्मा ब्रह्म-यह आत्मा ब्रह्म है। इन चार महावाक्यों का मन की प्रमुख आसुरी वृत्तियों को निर्मूल करने के लिए वैसा ही प्रभाव है जैसा देवी के चार प्रमुख आयुधों का असुर संहार में होता है।

अविद्या के विनष्ट होते ही जीव के सभी बन्धन टूट जाते हैं और वह मुक्त हो जाता है। उसे अनन्त विस्तार प्राप्त हो जाता है। जीव देवी (ब्रह्मन्) से मिलकर एक हो जाता है। इन्द्रियों की प्रमुख शक्ति के रूप में विद्यमान शरीर में स्थित देवता प्रसन्न हो जाते हैं। प्राणवायु का संतुलित प्रवाह होने लगता है। मन परमात्मा की दिव्य झलक से परिपूर्ण हो जाता है। परमानन्द का सागर आलोड़ित होने लगता है और जीवात्मा हमेशा-हमेशा के लिए इस सागर में समाहित हो जाती है!

आत्मसाक्षात्कार प्राप्त योगी के लिए सम्पूर्ण जगत ही देवी की दिव्य लीला की अभिव्यक्ति है।

महासरस्वती की जय हो! जय हो!! हे देवी, अपने चरण कमल में हम सबों को अटूट भक्ति दो!

नारायणी स्तुति

मेधा ऋषि बोले– "शुम्भ सहित समस्त दैत्यों का संहार हो जाने के पश्चात् अग्नि, इन्द्र, तथा अन्य सभी देव अत्यन्त प्रसन्न होकर देवी की इस प्रकार स्तुति करने लगे:–

"हे देवी! जो आपकी शरण में आता है उसकी समस्त विपदाओं को आप तुरन्त दूर कर देती हैं। हे जगद्‌जननी! आप हम सबों पर प्रसन्न हों। प्रसन्न हों। समस्त सृष्टि की स्वामिनी प्रसन्न हों। आप सभी चराचर जगत् की एक मात्र अधिष्ठात्री देवी हैं।

आप सृष्टि की एक मात्र आधार हैं। समस्त प्राणियों के चित्त रूप में विद्यमान रहकर आप उन्हें जीवन प्रदान करती हैं। जल की तरलता के रूप में आप समस्त सृष्टि का लय कर देती हैं। आपकी शक्ति अपारिमेय है।

आप वैष्णवी शक्ति (विष्णु की शक्ति) हैं। आप की शक्ति अपरिमित है। आप ही सृष्टि के स्त्रोत हैं। आप परम माया हैं। आपने समस्त जीव और जगत् को अपनी माया के बल से वशीभूत किया है। आप प्रसन्न हो और समस्त प्राणियों के लिए मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करें।

हे देवी, विश्व में ज्ञान के जो अनेक रूप हैं, वे सब आपके स्वरूप की ही विभिन्न अभिव्यक्तियां हैं। संसार की

समस्त स्त्रियाँ आपका ही रूप हैं। माता के रूप में आप समस्त ब्रह्मांण्ड में परिव्याप्त हैं। हम आपकी महिमा का गान कैसे करें? आप वाणी और समस्त योगसाधनाओं से परे हैं।

हे देवी नारायणी! आप बुद्धि रूप होकर सभी प्राणियों में स्थित हैं। आप स्वर्ग एवं मुक्ति दायिनी हैं। आपको नमस्कार है!!

आप इस सृष्टि के आदि कारण हैं। इस जगत की संहारक शक्ति भी आप हैं। सभी मंगलों की प्रतिमूर्ति नारायणी देवी को बार–बार नमस्कार है।

आप मंगलों के मंगल और महादेव की प्रियतमा हैं। आप सम्पूर्ण कामनाओं को पूर्ण करने वाली हैं। आप सबों के एक मात्र आश्रय हैं। आप त्रिनेत्री देवी हैं। आप गौरी और नारायणी हैं। आपको नमस्कार है!

हे माता, आप इस चराचर जगत की सृष्टि, पालन और संहार करने वाली शाश्वत शक्ति हैं। आप त्रिगुणमयी हैं। हे नारायणी, आपको पुनः–पुनः नमस्कार है!

हे माता, जो भी आपकी शरण में आता है उन्हें आप अभय करके शरण प्रदान करती हैं। जो दुःखी हैं तथा आर्तभाव से आपकी भक्ति करते हैं, उन्हें आप सभी प्रकार के कष्टों से मुक्त कर देती हैं। आप सबों के दुःख दर्दों को दूर करने वाली हैं। आप नारायणी देवी को नमस्कार है! हे माता, अपने वाहन हंस पर बैठी हुई कुश से अपने कमण्डलु के जल को छींटने वाली ब्राह्माणी (सरस्वती देवी) आप नारायणी हैं। आपको बार–बार नमस्कार है!

आप महा सरस्वती (शिव की प्रियतमा) के रूप में प्रकट होकर त्रिशूल, चन्द्रमा और सर्प धारण करती हैं। उस समय आप वृषवाहना (बैल की सवारी करने वाली) होती हैं।

हे माता, आप शंख, कमल, गदा, चक्र तथा श्रृँग धनुष धारण करती हैं। आपने ही चक्रधारी शूकरावतार ले कर अपने विशाल दांतों पर इस पृथ्वी को उठाया था और प्रलय के जल से बाहर निकाल कर इसकी रक्षा की थी।

शिव या विष्णु की प्रियतमा देवी, आपको बार–बार नमस्कार है! आपने ही भयानक नरसिंह रूप धारण कर असुरों का विनाश किया है। आप इस तीन लोकों के रक्षक हैं। हे नारायणी! आपको नमस्कार है।

हे माता! इन्द्राणी (इन्द्र की प्रियतमा) के रूप में एक सहस्त्र आँखें, गदा और अति प्रखर किरीट आपकी शोभा बढ़ाते हैं। शिवदूती के रूप में आपने ही असुरों की अत्यन्त विशाल सेना को नष्ट किया। उस समय आपकी गर्जना बहुत भयावह थी और आपका रूप साक्षात् काल के समान डरावना था।

हे चामुण्डा देवी, महाविशाल दाँतों के कारण बहुत भयानक असुर– मुण्ड को मारने वाली आप ही हैं। आप नारायणी हैं! आपको नमस्कार है!

"लक्ष्मी, लज्जा, प्रज्ञा, श्रद्धा, पुष्टि, स्वधा, अमरता, अँधकार और अविद्या आप ही हैं। हे नारायणी, आपको बार– बार नमस्कार है।"

हे माता, आपका त्रिनेत्री सौम्य स्वरूप सतत् हम सबों की रक्षा करे। हे कात्यानी, आपको नमस्कार है।

हे भद्रकाली, आप असुरों के संहारक हैं। आप अग्नि की तरह भयानक हैं। आपका त्रिशूल हम सबों की रक्षा करे!

हे देवी, आपके घन्टे की ध्वनि हम सबों की रक्षा करे तथा असुरों के तेज को मलीन बना दे! असुरों के रक्त से रंजित आपकी तलवार हम सबों की रक्षा करे।

हे माता, जब आप संतुष्ट रहती हैं तो आप सभी प्रकार के रोगों को दूर कर देती हैं। जब आप क्रोध में होती हैं तो पलक मारते ही समस्त ऐश्वर्य और काम्य वस्तुओं को विनष्ट कर देती हैं। आपकी शरणागति होने के पश्चात् ऐसा कोई दुःख नहीं जो दूर न हो जाय।

हे माता, आप इस ब्रह्माण्ड के नियन्ता एवं स्वामी हैं। आप इस जगत के संरक्षक हैं। आपका शरीर ही ब्रह्माण्ड है। आप इस सृष्टि के आधार और पालक हैं। हे देवी, आप प्रसन्न हों! आप हमारे मन से शत्रुभय को समाप्त करें।"

देवी ने क़हाः– "देवताओं! मैं वरदायिनी देवी हूँ। संसार के कल्याण के लिए आप जो वरदान चाहते हैं माँग लीजिए। मैं वही वरदान दूँगी।" देवताओं ने कहाः– "हे जगत जननी, आपने हमारे समस्त शत्रुओं का संहार कर दिया। कृपा करके इस त्रिलोकी में जो भी क्लेश है उसे समाप्त कर दीजिए!

देवी बोलीः– "वैवश्वत मनवन्तर में पुनः शुम्भ और निशुम्भ जन्म लेंगे। उस समय मैं नन्दगोप के घर में यशोदा के गर्भ से उत्पन्न होकर विन्ध्याचल में रहते हुए दोनो (शुम्भ एवं निशुम्भ) का संहार करूँगी।

मैं विप्रचित्त नामक महाभयानक असुर का संहार करने के लिए पुनः अवतार लूँगी। असुरों को आहार रूप में भक्षण करते–करते मेरे दाँत लाल हो जायेंगे। उस समय देवता तथा मानव मुझे रक्त दन्तिका के नाम से सम्बोधित करेंगे।"

जब एक सौ वर्ष तक इस पृथ्वी पर जल की वृष्टि नहीं होगी उस समय महात्माओं की रक्षा के लिए मैं पुनः अवतार लेकर उन महात्माओं को अपनी एक सहस्त्र आँखों से देखूँगी। उस समय वे लोग मुझे 'शताक्षि' नाम से जानेंगें।

"उसके पश्चात मैं दुर्गम नामक एक महाभयानक राक्षस का संहार करूँगी। लोग मुझे तब दुर्गादेवी कहकर पुकारेंगे। फिर मैं अपने भयानक रूप में हिमालय में प्रगट हो कर महात्माओं की रक्षा करूँगी। उस समय मैं धीमा देवी के नाम से प्रख्यात होऊँगी। जब अरुणाक्ष्य नामक दैत्य के अत्याचार से सारा जगत दुःखी हो जाएगा तो मैं संसार के कल्याण के लिए भ्रामरी देवी के रूप में पुनः अवतार लूँगी। इस प्रकार जब–जब असुरों के अत्याचार से यह पृथ्वी दुःखी होगी मैं स्वयं को प्रकट कर असुरों का नाश एवं देवताओं के सभी प्रकार के कष्टों को दूर कर दूँगी।

इस प्रकार नारायणी स्तुति समाप्त होती है।

प्रतीक अर्थ

देवी का हंस ब्रह्माण्डीय मन है। कुश के द्वारा देवी जिस जल को छींटती हैं, वह प्रत्येक हृदय में प्रस्तुत कर्म बीज को विकसित करने के लिए आवश्यक ब्रह्माण्डीय संकल्प है।

दृष्टा, दृश्य और दृष्टि की त्रिपुटि उमा देवी का त्रिशूल है यह प्रत्येक व्यक्ति में कुण्डल लगाए गुह्य कुण्डलिनि शक्ति का भी परिचायक है। बैल धर्म का प्रतीक है।

मयूर पंखों से सुशोभित कुमारी देवी आध्यात्मिक शक्तियों के प्रकट होने का परिचायक है।

जिसके कारण बुरे विचारों के सर्प को खाने वाले विभिन्न प्रकार के सद्‌विचारों की उत्पत्ति साधक के मन में होने लगती है। इसी प्रकार विभिन्न प्रकार की देवियों की उत्पत्ति आध्यात्मिक विकास के विभिन्न स्तरों पर चेतना में होने वाले विकास का परिचायक है।

शास्त्र महिमा

देवी ने कहाः—"इस ग्रन्थ में दी गयी प्रार्थनाओं के द्वारा जो भी हमारा पूजन करता है निश्चित रूप से मैं उनके समस्त कष्टों को समाप्त कर देती हूँ। जो भी महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती के रूप में मेरे द्वारा की गयी लीलाओं तथा मधुकैटभ, महिषासुर और शुम्भ—निशुम्भ के वध की कथाओं को पढ़ता या सुनता है उसे दुर्भाग्य का सामना नहीं करना पड़ेगा और नहीं उसे कभी दरिद्रता स्पर्श करेगी। वह अपनी इच्छित वस्तुओं को प्राप्त करेगा। उसके शत्रु उसे हानि नहीं पहुँचा सकते। वह अग्नि, जल और सभी प्रकार के अस्त्र—शस्त्र के बीच भी .सुरक्षितरहेगा। वह कभी भयभीत नहीं होगा।"

"देवी महात्म्य नाम से प्रसिद्ध इस सद्ग्रन्थ का भक्तजन सतत अध्ययन करें। यदि वे स्वयं पढ़ नहीं सकते, तो दूसरों से इसका श्रवण तो करें ही। यह ग्रन्थ परम सौभाग्य देने वाला है। मेरी महिमा से सभी दुःख, व्याधियाँ और अमंगलों का नाश होता है। जिस घर में इस ग्रन्थ का नित्यप्रति पाठ होता है उसका मैं कभी त्याग नहीं करती।

यदि कोई मेरी लीलाओं के कीर्तन और श्रवण के साथ–साथ अनुष्ठानिक आराधना भी करता है, तो हमारी महिमा और अधिक बढ़ जाती है। श्रद्धा और भक्ति पूर्वक मुझे जो भी अर्पित किया जाता है मैं उसे सहर्ष स्वीकार करती हूँ।"

"जो भक्त श्रद्धा–भक्ति पूर्वक हमारी लीलाओं का गान तथा विविध प्रकार से मेरा पूजन करते हैं, उन्हें मैं अनन्त समृद्धि और सुख प्रदान करती हूँ। देवी पूजा के लिए जो शुभ दिन निश्चित किए गए हैं, उन दिनों में जो मेरी शास्त्रोक्त विधि से आराधना करता है उसे मैं विशेष आशीर्वाद देती हूँ।"

"मेरी महिमा का श्रवण करने के पश्चात यदि कोई योद्धा संग्राम करने जाता है तो वह निर्भय होकर युद्ध करता और विजयी होता है। जहाँ और जब भी शान्ति की आवश्यकता हो, वहाँ हमारी महिमा का गान होना चाहिए। जब व्यक्ति को बहुत दुःख होता अथवा किसी दुःस्वप्न के कारण वह दुःखी होता है, तो मैं उसके सभी दुःख दूर कर देती हूँ। मैं ग्रहों के कुप्रभावो को भी समाप्त कर देती हूँ। मैं दुःस्वप्नों को मंगलकारी स्वप्नों में बदल देती हूँ।"

"जो व्यक्ति देवी महात्म्य का एक बार अध्ययन कर लेता है, उसे वही पुण्य प्राप्त होता है जो सर्वोत्तम पूजन सामग्री द्वारा प्रति दिन एक वर्ष तक मेरे पूजन, ब्राह्मण भोजन और विविध प्रकार के पुण्यकारी कर्मों के द्वारा प्राप्त होता है।"

"मेरे प्राकट्य का जो श्रवण अथवा कीर्तन करता है उसके समस्त पाप विनष्ट हो जाते हैं। वह दुरात्माओं के प्रभाव से मुक्त होकर अनन्त वैभव प्राप्त करता है। उसके समस्त शुत्रु समाप्त हो जाते हैं।"

"जंगल, विदेश, दावानल, लुटेरों के बीच, शत्रुओं में, जंगली जानवरों के समक्ष, कारागार में, महासमुद्र, महासागर अथबा अन्य कहीं भी असहाय, निरूपाय अवस्था में यदि कोई मेरा श्रद्धा पूर्वक स्मरण करता है, तो मैं उसे सभी संकटों से मुक्ति दिलाती हूँ। ज्योंही उसका मन मेरी ओर लग जाता है, उसकी सभी विपत्तियाँ समाप्त हो जाती हैं और उसकी खोई गरिमा और ऐश्वर्य प्राप्त हो जाता है।"

ऐसा कहकर देवी अन्तर्ध्यान हो गयी। देवी की कृपा से देवताओं को अपनी खोई गरिमा मिल गयी, असुरों का नाश हो गया और जो भी असुर बच गये थे वे पाताल लोक में छुप गए।

महर्षि मेधा ने तब राजा सुरथ से कहा:–"देवताओं के देखते–देखते देवी विलीन हो गई। अपने शत्रुओं से मुक्त होने के बाद देवताओं को यज्ञ का अंश प्राप्त होने लगा।

हे राजन, यह देवी शाश्वत और अमर है। धर्म की स्थापना करने के लिए बार–बार प्रकट होती हैं। उस देवी के प्रभाव से ही यह समस्त जगत माया से प्रभावित रहता

है। वही देवी जगत के स्रष्टा हैं। जब वे प्रसन्न होती हैं तो विवेक और ज्ञान की ज्योति प्रदान करती हैं। विनाश काल में वही देवी भयानक महामारी के रूप में प्रकट होती हैं। वही देवी पोषक एवं धारक है। वे अनन्त, अमर और शाश्वत हैं।

भाग्य के उदय के साथ वे ही लक्ष्मी बन जाती और दुर्भाग्य के रूप में विपत्ति एवं दारिद्रप देने वाली वे ही काली बनती हैं। जब व्यक्ति पत्र, पुष्प, चन्दन, और यज्ञ की अन्य सामग्रियों से उनकी पूजा करता है तो वे प्रखर स्वास्थ्य, दीर्घ जीवन, बुद्धि, विद्या, मंगल एवं मुक्ति प्रदान करती हैं।''

कथा का निष्कर्ष

महर्षि मेधा ने कहा—राजन! मैंने महादेवी की कथा विस्तार से सुना दी है। जिस देवी ने इस संसार की सृष्टि, पालन एवं संहार किया है, उनकी कृपा से आपको आत्मज्ञान हो जाएगा। उसी देवी ने संसार के सभी प्राणियों को माया से बान्ध रखा है। इसलिए हे राजन, उसी देवी की शरण में जाइए। देवी जब प्रसन्न होती हैं तो सांसारिक सुख के साथ–साथ जन्म–मृत्य के चक्र से मुक्ति भी प्रदान करती हैं।

महर्षि की इन बातों को सुन राजा सुरथ एवं वैश्य समाधि ने ऋषि के चरणों की पूजा करके उनकी आज्ञा से

देवी का ध्यान करने लगे। देवी का दर्शन प्राप्त करने के लिए वे नदी के तट पर तप करने लगे।

उन्होंने रेत से देवी की प्रतिमा बनाई और उसे ही फल–फूल अर्पित करने लगे। वे निरन्तर निराहार रहते हुए विविध प्रकार की आहुतियों के द्वारा देवी को प्रसन्न करने लगे। एक वर्ष तक दोनों ने कठोर तप। उनकी साधना से प्रसन्न होकर देवी अपने दिव्य स्वरूप में उनके समक्ष प्रकट हो गयी।

देवी ने कहाः—हे राजन! हे पारिवारिक लोगों को प्रसन्न करने वाले, आप दोनो जिस वरदान की इच्छा करते हैं उसे मांगिए। सुरथ ने कहाः—"हे देवी! मुझे अपना राज्य प्राप्त करने का वरदान दें तथा जब तक मैं जीवित रहूँ, तब तक निर्वाध रूप से राज्य करता रहूँ।"

बुद्धिमान वैश्य ने कहाः–"मुझे आसक्ति और देहाध्यास दूर करने वाला ज्ञान प्राप्त हो जिससे मैं सांसारिकता के इस चक्र से मुक्त हो सकूँ।"

देवी ने कहाः—हे राजन! शीघ्र तुम्हे अपना राज्य वापस मिल जाएगा। अपनी मृत्यु के बाद तुम सूर्यदेव के माध्यम से सावर्णिक मनु के रूप में जन्म लोगे। तुम्हारा राज्य निष्कंटक होगा।"

हे वैश्य श्रेष्ठ! तुम्हे आत्मज्ञान प्राप्त हो जाएगा जिसके कारण तुम्हें मुक्ति मिलेगी। अपने भक्तों की इच्छानुसार वरदान देकर देवी अन्तर्ध्यान हो गई।

प्रतीक अर्थ

पहले बताया जा चुका है कि सुरथ-जीवात्मा और वैश्य विभिन्न विचार तरंगों में छुपी समाधि का प्रतीक है।

संसार की असारता और मिथ्यापन को जानकर जीव, मेधा ऋषि (अन्तःप्राज्ञिक ज्ञान) के पास जाता है। वहाँ वह समाधि (मन की गहन ध्यानावस्था) वैश्य के साथ मिलता है।

महर्षि मेद्या परम शुद्ध चेतना के परिचायक हैं। वे जीव को देवी की महिमा से अवगत कराते हैं। जब जीव मुक्ति के दिव्य धाम की ओर अग्रसर होने लगता है तो परिशुद्ध चेतना, जीव को दिव्य शक्तियों की विभिन्न अभिव्यक्ति को उद्घाटित करने में सहयोग करती है।

देवी माँ महाकाली या दुर्गा के रूप में मन के विकारों (मल) को विनष्ट करती हैं। विक्षेप के रूप में मन की सूक्ष्म विकृतियों को यही देवी महालक्ष्मी के रूप में दूर करती हैं और अविद्या के रूप में सूक्ष्मतम

विकृतियों को महासरस्वती के रूप में यही देवी समाप्त करती हैं।

देवी भोग (इस संसार के भौतिक सुख) और मोक्ष दोनों प्रदान करती हैं। जब देवी प्रसन्न हो जाती हैं तो वे जीव को जीवन मुक्ति के रूप में इसी जीवन में और विदेह मुक्ति के रूप में मरने के बाद निर्वाधित साम्राज्य प्रदान करती हैं।

जीवनमुक्त (जीवितावस्था में ही मुक्त होने वाला) सभी प्रकार के कर्म बन्धनों से स्वतंत्र होकर जगत् कल्याण के लिए कार्य करता है। जब उसके प्रारब्ध कर्म समाप्त हो जाते हैं, तो वह परमात्मा में समाहित हो जाता है। वह पुनः जन्म-मृत्यु के चक्र में नहीं पड़ता। वैश्य-समाधि (जो मन की आत्मनिष्ठ अवस्था का प्रतीक है) आत्मस्वरूप का ज्ञान कर परमात्मा में लीन हो जाता है।

संक्षेप में इस कथा का सन्देश यह है कि सांसारिकता के चक्र में उलझा हुआ जीव परिशुद्ध चेतना के (मेधा) आश्रम में जाकर समाधि के साथ मित्रता करता है। अर्थात धारणा, ध्यान और समाधि का अभ्यास करता है और अन्तःप्रज्ञा से चेतना के विस्तार-देवी के विषय में सीखता है।

निरन्तर ब्रह्माभ्यास और देवी की भक्ति के द्वारा जीवात्मा को जीवन मुक्ति होती है। प्रारब्ध कर्मो के समाप्त होने के पश्चात उसे विदेह मुक्ति मिलती है।

देवी पूजा दो प्रकार से की जाती है। अर्चन, पूजन, सेवा, एकान्तवास इत्यादि के रूप में वहिरंग उपासना तथा चिन्तन, मनन, ध्यान, और समाधि के अभ्यास (अन्तरंग) के द्वारा जीव देवी (परमात्मा) की कृपा प्राप्त कर भोग (भौतिक आनन्द) और मोक्ष (मुक्ति) दोनों प्राप्त करता है।

परमात्मा की उपासना के बिना न तो कोई सफलता मिल सकती है और न किसी प्रकार का विकास हो सकता है। देवी महात्म्य सभी जीवों के अन्तर्वासी परमात्मा की महिमा का बखान है। जब परमात्मा (देवी) प्रसन्न हो जाते, जब सार्वभौमिक एकता के गहरे सिद्धान्त के आधार पर जीवन व्यतीत किया जाने लगता है, तो व्यक्ति का अहं समाप्त हो जाता है। उसका हृदयाकाश सभी प्रकार की आसुरी वृत्तियों के बादल से रहित हो जाता है। शाश्वतता की सुमधुर बयार परमानन्द और अमरत्व की सुगन्ध बिखेरती हुई मन्द-मन्द बहने लगती है।

इस प्रकार देवी की दिव्य लीलाओं की कथा समाप्त हो गयी।

हम सभी को देवी की अनन्त अनुकम्पा प्राप्त हो।

जगत जननी की ओर उन्मुख होइए

''एकम् सद्विप्रा बहुधा वदन्ति''--सत्य एक है, परन्तु विभिन्न धर्मों के सन्त महात्माओं द्वारा इसकी अभिव्यक्ति विभिन्न रूपों में होती है। एक ही सत्य को दार्शनिक परमतत्त्व, वेदान्ती ब्रह्मन, भक्त ईश्वर, वैष्णव–विष्णु, शैव शिव, शाक्त–शक्ति, जैन–अरहत, बौद्ध–बुद्ध, क्रिश्चन–जेसस, और मुसलमान अल्लाह कहते हैं। एक ही सत्य को राम, कृष्ण, गणेश, लक्ष्मी सुब्रह्मण्यम्, दुर्गा, सरस्वती और अन्य देवी देवताओं के रूप में जाना जाता है।

प्रत्येक इष्ट देवता परम ब्रह्म परमात्मा का एक रूप है। परमात्मा स्वयं को अनन्त रूपों में अभिव्यक्त करते हैं। हिन्दू संस्कृति में ईश्वर के पूजन का सर्वाधिक रूपों में विधान किया

गया है। परमात्मा की आराधना अनन्त प्रकार से की जा सकती है।

परम ब्रह्म परमात्मा के सम्बन्ध में दो विचार हैं: पहला परमात्मा का अव्यक्त (स्थिर) स्वरूप और दूसरा व्यक्त (गतिशील) रूप। ब्रह्मन् के अव्यक्त रूप को ईश्वर कहा जाता है, जबकि उसके व्यक्त (गतिशील) रूप को माया या शक्ति कहते हैं जिसकी अभिव्यक्ति देवी के रूप में होती है।

जब देवी को परम ब्रह्म परमेश्वर के रूप में स्वीकार किया जाता है तो ब्रह्मा, विष्णु और शिव को देवी का सहायक माना जाता है। दूसरी ओर जब विष्णु अथवा शिव की उपासना परम ब्रह्म परमात्मा के रूप में की जाती है तो उस स्थिति में देवी के विभिन्न स्वरूपों को उन देवों का सहायक माना जाता है। इस स्थिति में माया (शक्ति या देवी) परमेश्वर की सेवा करती हैं। यही शक्ति लक्ष्मी के रूप में विष्णु, सरस्वती के रूप में ब्रह्मा और दुर्गा के रूप में शिव की प्रिया बन जाती हैं।

जिस प्रकार अग्नि को ऊष्मा से और शीतलता को हिम से पृथक नहीं किया जा सकता, वैसे ही परमेश्वर को माया से भी अलग नहीं किया जा सकता है। चाहे कोई साधक परमात्मा के पितृ अथवा मातृ रूप की आराधना क्यों न करे, उनके दोनों रूपों की पूजा स्वतः हो जाती है। परमात्मा वास्तव में न माता है और न पिता। ईश्वरीय आराधना के समय मानवी सम्बन्धों की जितनी भी धारणायें हैं उन सबों से साधक परे हो जाता है।

देवीपूजा अत्यन्त रहस्यमय और गुह्य है। इसका बहुत गहरा प्रतीक अर्थ है। माता (देवी) बालक (जीवात्मा) को पालपोष कर बड़ा करती है और उसे विष्णु अथवा शिव के

रूप में विद्यमान पिता—ब्रह्मन् के समक्ष प्रस्तुत करती है। ज्योंही जीवात्मा अपने पिता के समक्ष आता है, उसी पल समस्त द्वैत समाप्त हो जाता है। माता, पिता और जीव ये सभी ब्रह्मन् हो जाते हैं।

देवी पूजा की धारणा अत्यन्त आकर्षक और अद्भुत है। जीवन के घनघोर संग्राम और विविध प्रकार की विपत्तियों की धधकती लपटों के बीच देवी—माता की स्नेहिल गोद में शीतल समर्पण ही देवी पूजा और साधना का सारतत्व है।

इस प्रणाली में जीवन की अत्यन्त विषम परिस्थितियों में भी परमेश्वर का माता के रूप में ध्यान किया जाता है और परम चेतना—देवी माता के खुले अंकपाश में जो स्थूल शरीर, प्राण, इन्द्रियाँ, मन और बुद्धि के रूप में हमारी आत्मा को अपने में समेटे हुए है, के प्रति स्वयं को पूर्णतः समर्पित कर दिया जाता है।

अपनी दृष्टि को अन्तर्मुखी बनाइये। शान्त हो कर माँ की उपस्थिति का अनुभव कीजिए। उसकी ही शक्ति आपकी असंख्य नाड़ियों में प्रवाहित हो रही है। उसने आत्मा को अपने स्नेहिल अंकपाश में छुपाये रखा है। आपके भाव, विचार और कामनाओं में उसकी ही स्नेहिल शक्ति संचालित होती है। प्राणों में उसका ही स्पर्श है तथा जीवन की सुख—दुःख की परिस्थितियों के माध्यम से उसकी प्रसन्नता और नाराजगी प्रकट होती है।

अपने विनाशकारी रूप में देवी अत्यन्त भयावह और संहारक दिखाई पड़ती हैं। भौतिक स्तर पर वे सभी प्रकार की सांसारिक बाधाओं को विनष्ट करती हैं। सूक्ष्म स्तर पर मन और इन्द्रियों की सूक्ष्म बाधायें दूर करती हैं तथा कारण स्तर

पर सूक्ष्मतम अवरोधो को समाप्त करती हैं। अपने संहारक रूप में ये महाकाली कहलाती हैं।

यही देवी जीवों की रचनात्मक अभिव्यक्ति की पोषक और संरक्षक भी हैं। टूटे और जीर्ण महल को जहाँ दुर्गा विनष्ट करती हैं, वहीं महालक्ष्मी अत्यन्त आकर्षक अट्टालिका निर्मित करती हैं। जहाँ दुर्गा खण्डहर के पत्थर–बालू की सफाई करती हैं, वहीं महालक्ष्मी सुन्दर उपवनों का निर्माण करती हैं। जहाँ शरीर के रोगग्रस्त अवयवों को काटकर निकालने की शल्य चिकित्सा दुर्गा करती हैं, वहीं महालक्ष्मी घाव भरने का स्वास्थ्य दायक कार्य करती हैं। इस प्रकार तुष्टि, पुष्टि, प्रखर स्वास्थ्य और दिव्य आध्यात्मिक गुणों के आभूषण से महालक्ष्मी व्यक्ति को सुशोभित करती हैं।

सरस्वती के रूप में यही देवी आत्मा की भव्यता का दर्शन कराती हैं। जहाँ दुर्गा नाश और लक्ष्मी निर्माण करती हैं, वही सरस्वती जीवात्मा की प्रसुप्त शक्तियों को उद्घाटित करती हैं। सरस्वती वाणी की देवी हैं। ये ललितकला और सभी प्रकार की ज्ञानदायिनी देवी हैं। ये परिशुद्ध चेतना की अधिष्ठात्री हैं।

देवी की विभिन्न अभिव्यक्तियाँ निम्न और उच्च स्तर में क्रियाशील रहती हैं। जब तक व्यक्ति की दृष्टि और इन्द्रियां इस संसार तक ही सीमित है, तब तक देवी भौतिक जगत के सापेक्षिक मूल्यों तक ही क्रियाशील रहती हैं। इस स्तर पर दुर्गा सभी प्रकार के सांसारिक शत्रुओं और भव वाधाओं का विनाश करती हैं। परन्तु जब देवी अप्रसन्न होती है, तो मानव जीवन अनेक प्रकार की समस्याओं से घिर जाता है।

लक्ष्मी धन दायिनी देवी हैं। उनके अप्रसन्न होने पर व्यक्ति मोह, भ्रम, आसक्ति और विभिन्न प्रकार के द्वेषों में उलझ जाता है। सरस्वती देवी आत्मज्ञान और आत्मसाक्षात्कार प्रदान करती हैं। उनकी अप्रसन्नता व्यक्ति को अहंकार, अभिमान, वासना और व्यग्रता के सागर में डूबो देती है। निम्न क्रियाओं में देवी की उपस्थिति का अनुभव करते हुए साधक को इनसे ऊपर उठने का प्रयास करना चाहिए। श्रद्धा और भक्ति पूर्वक देवी की आराधना से उनकी प्रसन्नता प्राप्त की जा सकती है। देवी के प्रसन्न होने पर ही साधक उनकी दिव्य क्रियाओं को उद्‌घाटित कर सकता है जिसकी सहायता से वह आध्यात्मिक महिमा और उपलब्धियों के उच्च सोपानों पर आसीन हो जाता है।

यह सृष्टि त्रिगुणमयी है। देवी त्रिगुणात्मिका हैं। दुर्गा तमसमयी, लक्ष्मी रजसमयी और सरस्वती सत्त्वमयी हैं।

कोई भी गुण अकेले क्रियाशील नहीं हो सकता है,। एक गुण की प्रवलता होती है, परन्तु अन्य गुण प्रसुप्त अवस्था में रहते हुए कुछ न कुछ अंश में अवश्य प्रभावी रहते हैं। उदाहरण के लिए जब सात्त्विक गुण की प्रबलता होती है, तो रजस तथा तमस प्रसुप्त रूप से सहयोगी रहते हैं। कोई भी कर्म न तो पूर्णतः सात्त्विक हो सकता है और नहीं पूर्णतः राजसिक अथवा तामसिक।

इसलिए देवी के तीनों रूप जीवन के प्रत्येक क्षण और अनुभव में क्रियाशील रहते हैं। देवी ही स्त्रियों में कोमलता, पुरुषों में कठोरता, विपत्ति में धैर्य और दुष्टों में अधीरता और निर्दयता तथा सन्तों की करुणा हैं। देवी ही सांसारिक व्यक्ति

की कामनायें की कामना रहित अवस्था ह। साधकों में विभिन्न वस्तुओं के प्रति न्न होने वाले आकर्षण पर विजय प्राप्त करने की शक्ति भी देवी हैं। देवी ही भ्रम उत्पन्न करती हैं तथा वे ही प्रबुद्धता प्रदान करने वाली हैं।

वे परम करुणामयी हैं। जीवन की विषम परिस्थितियों की पृष्ठभूमि में दिव्य ईश्वरीय करुणा क्रियाशील रहती है।

यदि आप रामायण पढ़ेंगे तो आपको ज्ञात होगा कि ज्योंही श्री राम को युवराज घोषित किया जाने वाला था, तो उसी समय देवी ने ही उन्हे गहन कष्टों को सहने के लिए वन में भेज दिया। परन्तु इसके पीछे राक्षसों का संहार करने की कल्याणकारी योजना छुपी थी। बुद्ध को जब राज्य का सुख प्राप्त हो रहा था, तो देवी ने ही उनके मन में वैराग्य की ज्योति जलाकर उन्हें गया के जंगलों में भेज दिया। जब जेसस क्राइस्ट अपने दिव्य कार्यों को तेजी से फैला रहे थे, तो देवी ने उन्हें निर्ममतापूर्वक शूली पर चढ़ाकर मृत्यु धाम पहुँचा दिया। देवी की क्रियायें बड़ी रहस्यमय हैं।

माता के दिव्य अंक में विश्राम कीजिए

ईश्वर को माता के रूप में प्रेम और आराधना करने का एक गहन मनोवैज्ञानिक आधार तथा सुन्दरता है। करीब–करीब सभी लोग माता के कोमल और स्नेहिल संरक्षण में बड़े होते हैं। इस लिए लगभग सभी व्यक्तियों के अचेतन मन की गहराई में माता के प्रति सुकोमल और स्नेहिल भाव विद्यमान रहते हैं। माता को एक शिशु अपना सबसे सुरक्षित आश्रय के रूप में अनुभव करता है। बालक और माता के मध्य परस्पर विश्वास का सुदृढ़ बन्धन हुआ करता है। बालक जब बड़ा हो जाता है, तो वह पहले माता से चिपका नहीं रहता। अब वह प्रेरणादायी आधार तथा सुरक्षित आश्रय के लिए जगत जननी की ओर उन्मुख होने की आवश्यकता का अनुभव करता है।

आप अपनी सांसारिक माता के प्रति अपने शैशवास्था में जिस प्रकार की श्रद्धा, सर्मपण, विश्वास और निश्चलता रखते थे, वैसा ही रूपान्तरण यदि आप अपनी चेतना में अब ला कर जगत जननी के प्रति बना लें, तो आप साधुता की उत्कृष्ट अवस्था प्राप्त कर सकते हैं। यदि जगत जननी के प्रति आप का प्रेम अपनी लौकिक माता के प्रति प्रेम के बराबर अथवा अधिक है और यदि आप इस तथ्य को गहराई से अनुभव करते

हैं कि सृष्टि की माता आप की देखरेख करती है तथा आप की सहायता के लिए सदा तत्पर रहती हैं, तो आप आत्म साक्षात्कार प्रदान करने वाली अहंशून्य अवस्था को बड़ी सहजता से प्राप्त कर लेंगे। देवी पूजा का यही आधारभूत सार तत्व है।

योग शास्त्र में दो प्रकार की भक्ति बतायी गयी है। पहली को **मार्जर भक्ति** (विडालवत्) और दूसरी को **मरकट भक्ति** (बानरी) कहा ज़ाता है। इनका बन्दर और बिल्लियों से कुछ लेना देना नहीं है।

बिल्ली का बच्चा जब किसी कठिनाई में होता है तो म्याऊँ, म्याऊँ, करता है। बिल्ली तुरन्त उसके पास पहुँचती है और बड़ी सावधानी और कोमलता से उसे अपने दाँतों से पकड़ कर किसी सुरक्षित स्थान पर पहुँचा देती है। इसी प्रकार जब साधक के व्यक्तित्व का समग्र और सन्तुलित विकास हो जाता है, तो जीवन और जगत के प्रति उसका दृष्टिकोण बड़ा सहज और तनावरहित हो जाता है। अन्तर मन में यह विश्वास स्थापित हो जाता है कि देवी माता उसकी सहायता करने के लिए सदा तैयार हैं। उसे दिव्य सहायता के लिए केवल जगत जननी को पुकारना है। निश्चय ही वे दिव्य संरक्षण और आधार प्रदान करेंगी। वे हमेशा उसे अपने अंक में सुरक्षित रखती हैं।

बन्दरों में यह देखा गया है कि जब वे एक डाल से दूसरी पर उछलते कूदते हैं, तो शिशु बन्दर अपनी बन्दरिया माता की छाती से चिपका रहता है। माता से सटे रहने का कार्य

बन्दर बालक का होता है। इसी भाव को जब भक्ति में प्रयुक्त किया जाता है तो इसे उन्नत्त प्रकार की भक्ति नहीं मानी जाती। क्योंकि इस में साधक अपने अहंकार और पुरुषार्थ को महत्त्व देता है। वह सोचता है कि यह वह है जो ईश्वर की ओर बढ़ रहा है या उससे चिपका है।

जीवन की सभी समस्यायें अहंकार के कारण उत्पन्न होती हैं। अपनी समस्याओं को सुलझाने की ठीक–ठीक विधि का ज्ञान नहीं रहने के कारण, आप अपने तनाव ग्रस्त अहंकार और जटिल मन के द्वारा उन समस्याओं का सामना करते हैं। आप की बुद्धि चाहे कितनी भी कुशाग्र क्यों न हो, जब तक आप के व्यक्तित्व में तनावग्रस्त अहं विद्यमान है, आप की समस्यायें और तीव्र होती जाती हैं। वे कभी सुलझती नहीं।

सभी धार्मिक प्रणालियाँ आप को अहं से विमुख होने की महान और रहस्यमय कला सीखाती हैं। शब्दों में भले ही अन्तर हो, परन्तु सबों का लक्ष्य अहं से दूर होना, परमात्मा के हाथों में अहं को छोड़ देना और यह सोच कर तनाव रहित हो कर बैठना है, कि आपके अन्तर्मन में विद्यमान ईश्वरीय शक्ति इस समस्या का समाधान कर लेगी।

देवी पूजा के माध्यम से इसी कला को विकसित किया जाता है। जब आप देवी को माता के रूप में मानते हुए आन्तरिक रूप से उनके प्रति श्रद्धा भक्ति रखते हैं तब आप अपने अहं को दूर रखने में सफल होते हैं। साधारण बौधिक प्रक्रिया में अहंकार को अलग नहीं किया जा सकता है।

इसीलिए भक्ति की आवश्यकता होती है। परमात्मा के लिए जब आप में वैसा प्रेम विकसित हो जाता है जैसा एक शिशु का उसकी माता के लिए है, तो उस प्रेम की शक्ति से आप अपने अहंकार को दूर कर सकते हैं। ऐसा करने से आप के मन में जीवन की चुनौतियों का सामना करने के लिए स्पष्ट मार्गदर्शन स्वतः प्राप्त होने लगता है।

देवी पूजा के द्वारा साधक जीवन–संग्राम तथा विपत्तियों की ज्वाला के मध्य परमेश्वर के सुरक्षित अंक में सहज समर्पण करने की कला सीखता है। जीवन की विषमतम घड़ियों में हम लोगों को देवी स्वरूपा परमात्मा के विशाल की भुजाओं में निश्चिन्त हो कर विश्राम करना चाहिए। देवी माता ही हमारे शरीर, प्राण, इन्द्रियां, मन और बुद्धि के रूप में अभिव्यक्त हो कर हमारी आत्मा को अपने अंक पाश में समेटे हुए हैं।

करुणामयी विध्वंसक

दुर्गा देवी की महिमा की व्याख्या करने वाले सद्ग्रन्थ दुर्गा सप्तशती में करुणामयी जगत जननी माता को घनघोर संग्राम में महाविनाशक शक्ति के रूप में महिमामंडित किया गया है। ऐसी स्नेहिल और ममतामयी माता भला इतना विध्वंसक कैसे हो सकती हैं?

इस ग्रन्थ की विविध कथाओं में जिन असुरों की बात कही गयी है, वे अज्ञान से उत्पन्न प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में छुपे

काम, क्रोध, लोभ, मोह, आसक्ति, द्वेष अहंकार, धोखाधड़ी , ईर्ष्या और अन्य विकारों के प्रतीक हैं। देवता जिनका वर्णन इस ग्रन्थ में आया है, वे प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में विद्यमान प्रेम, करुणा, धैर्य, शुचिता, त्याग, निर्भयता, वैराग्य, ज्ञान और निम्रता जैसे दिव्य शक्तियों के परिचायक हैं।

यह सदग्रन्थ हम सबों को यह स्मरण कराता है कि मानव जीवन को प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में आसुरी और दैवी शक्तियों के बीच चलने वाले संग्राम के रूप में देखना चाहिए। इस युद्ध को लड़ने के लिए जीव को देवी से दिव्य शक्ति प्राप्त कर, चेतना को संकुचित तथा मन को परिसीमित करने वाले भ्रम की आसुरी शक्तियों को विनष्ट करना आवश्यक है।

साधक की लम्बी आध्यात्मिक यात्रा की पूरी रूपरेखा नवरात्र पूजा के रूप में प्रस्तुत की गयी है। इसमें यह भी बताया गया है कि व्यक्ति के आध्यात्मिक प्रयासों को अवरुद्ध करने वाली आसुरी वृत्तियों (दुर्गुण) पर अन्तिम विजय प्रदान करने के लिए देवी माता साधक को कैसे अग्रसर करती हैं। इस तथ्य को इसमें अभिव्यक्त किया गया है। देवी पूजा का सार मन और इन्द्रियों को नियंत्रित करने, निम्न मन में उठने वाली कामनाओं को जीतने और आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने के लिए दैवी शक्तियों को बढ़ाना है।

इस महान लक्ष्य की प्राप्ति में देवी अपने तीन रूपों के माध्यम से साधक के मार्ग में आने वाले समस्त अवरोधों को

समाप्त कर देती हैं। दुर्गा के रूप में प्रकट हो कर साधक के भौतिक जीवन में आने वाली समस्त बाधाओं को—जिन्हें मल कहते हैं, देवी दूर करती हैं। लक्ष्मी रूप में प्रकट होकर देवी, साधक के उपचेतन और अचेतन मन में रहने वाले सूक्ष्म अवरोध जिसे विक्षेप कहा जाता है, को दूर करती हैं। सरस्वती देवी के रूप में अभिव्यक्त हो कर माता साधक के आध्यात्मिक पथ की सूक्ष्मतम अवरोध जिसे आवरण या अविद्या कहते हैं दूर करती हैं। तब साधक अपनी वैयक्तिक चेतना को ब्रह्माण्डीय (दिव्य) चेतना के साथ संयुक्त कर आत्मानुभूति प्राप्त कर लेता है।

नवरात्रि पूजा की रूप रेखा

नवरात्रि पूजा में देवी की नौ दिनों तक आराधना करने का विधान है। यद्यपि देवी माता एक ही हैं, परन्तु उनकी पूजा दुर्गा, लक्ष्मी और सरस्वती इन तीन रूपों में की जाती है।

नवरात्र पूजा के प्रथन तीन दिनों में दुर्गा देवी द्वारा स्थूल अवरोध और विषमताओं (मल) की समाप्ति पर बल दिया जाता है। साधक के चित्त (हृदय) में असंख्य जन्मों के कुसंस्कार और मलिनताओं के कारण वह काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, और ईर्ष्या जैसी विकृतियों से ग्रसित रहता है। ऐसा हृदय साँप, बिच्छू, तेलचट्टा, चूहा, उल्लू और मकड़ों से भरा हुआ उजाड़ घर के समान है। इस में रहने के लिए पहले इन अवांक्षनीय आक्रमणकारियों से इसे या तो मुक्त करना होगा अथवा इस खण्डहर को तोड़ कर नए भवन का निर्माण करना होगा।

सिंहवाहिनी माता दुर्गा, साधक के हृदय में प्रवेश कर उस में विद्यमान सभी मलिनताओं को निर्दयतापूर्वक विनाश करती हैं। वे पुराने जर्जर और जटिल व्यक्तित्व को तोड़ सहज और समतल बना कर स्वच्छ करती हैं, जिससे दिव्य गुणों को धारण करने वाला स्वच्छ और सहज व्यक्तित्व के नवनिर्माण का मार्ग सहज हो जाता है।

अगले तीन दिनों तक इसी देवी की आराधना इसके सृजनात्मक रूप—माता लक्ष्मी के रूप में की जाती है। कमल पुष्प कर बैठी (अथवा खड़ी) विकास के प्रतीक रूप में देवी अपने हाथों में कमल के पुष्पों को धारण करती हैं। देवी लक्ष्मी को समता, सज्जनता, समृद्धि तथा मंगल का प्रतीक रूप माना जाता है। साधक के जीवन में भौतिक तथा आध्यात्मिक सफलता और सुयश के रूप में उनकी कृपा प्राप्त होती है।

व्यक्तित्व के उजाड़ खण्डहर को जब देवी दुर्गा तोड़ कर साफ कर देती हैं तभी नवीन निर्माण की प्रक्रिया का आरंभ हो सकता है। नव निर्माण की योजना बनती है और फिर उसकी आधारशील रखी जाती है। देखते—देखते सुन्दर भवन निर्मित हो जाता है। उसमें अच्छी फुलवारी की भी व्यवस्था होती है। जैसे—जैसे आप उस सुन्दर भवन की भव्यता और समृद्धि को देखते हैं, वैसे—वैसे आप का हृदय विकसित होने लगता है। प्रसन्नत्ता की इसी अवस्था में यह माना जाता है कि आपके व्यक्तित्व में देवी लक्ष्मी का अवतरण हो गया है।

देवी लक्ष्मी जीवात्मा के सृजनात्मक अभिव्यक्ति की पोषक और धारक हैं। जहाँ माता दुर्गा खण्डहर को ध्वस्त करती हैं, वही लक्ष्मी माता भव्य भवन का निर्माण करती हैं। जहाँ देवी दुर्गा उबड़ खाबड चट्टानों को हटाती हैं, वहीं लक्ष्मी देवी हरा भरा सुन्दर उद्यान बना देती हैं। जहाँ देवी दुर्गा रोगग्रस्त मन को काटने की शल्य चिकित्सा करती हैं, वहीं माता लक्ष्मी उसके घाव को भरने का काम करती हैं।

देवी लक्ष्मी आध्यात्मिक और भौतिक समृद्धि की अधिष्ठात्रि देवी हैं। वे ऐश्वर्य (दिव्य महिमा) के प्रतीक हैं। आध यात्मिक प्रगति की इस अवस्था की पहचान साधक के व्यक्तित्व में विवेक, वैराग्य, करुणा, उदारता, दानशीलता, ईश्वरीय भक्ति, समता, मानसिक संतुलन और शुचिता जैसे दिव्य गुणों के उदय होने से की जाती है। दैवी सम्पत्त के ये सभी दुर्लभ उपहार हैं। माता लक्ष्मी विक्षेप (चंचलता) को दूर कर चित्त में स्थिरता लाती हैं।

नवरात्र पूजा के अन्तिम तीन दिनों में ज्ञान दायिनी देवी सरस्वती की आराधना की जाती है। आपके व्यक्तित्व के पुराने दुर्गुणों को जब माता दुर्गा विनष्ट कर देती हैं और लक्ष्मी देवी की कृपा से व्यक्तित्व दैवी सम्पदा (सद्‌गुण) से सम्पन्न हो जाता है तो आपकी आत्मा की प्रसुप्त शक्ति और विभूतियों को जाग्रत करने के लिए ज्ञान की देवी माता लक्ष्मी का प्राकट्य होता है।

देवी सरस्वती का रंग हिमालय के बर्फ के समान धवल बताया गया है। उन में वस्त्र और आभूषणों से शुद्ध और सफेद

ज्योति निकलने के कारण वे अत्यन्त प्रखर और ज्योतिर्मय आभा से प्रदीप्त रहती हैं। इसका निहितार्थ यह है कि माता सरस्वती सत्त्व–शुद्धता से परिपूर्ण हैं। मानव व्यक्तित्व में जब सत्त्व की वृद्धि होती है तो बुद्धि प्रखर हो जाती है जिससे अन्तःप्राज्ञिक अनुभूति में सहजता होती है।

देवी सरस्वती की तुलना जावाकुसुम से की गयी है। यह सुन्दर पुष्प न केवल सफेद है, बल्कि इस की सुगन्ध भी बहुत मधुर है। जहाँ परिशुद्धता भी है वहीं सुगन्धि, प्रकाश शुचिता, सुगन्धि और प्रदीप्ति भी है। वे अपने हाथ में वीणा धारण करती हैं, जो व्यक्तित्व में समता और संतुलन का प्रतीक है। व्यक्तित्व के विभिन्न तारों में समुचित संतुलन और समंजन आवश्यक है। क्यों कि देवी सरस्वती का अवतरण सम्यक रूप से संतुलित और समंजित व्यक्तित्व में ही होता है।

माता सरस्वती की सवारी हंस है, जो विवेक का परिचायक है। प्राचीन काल से यह लोकोक्ति प्रचलित है कि हंस पानी मिश्रित दूध से दूध और पानी को अलग–अलग करने जैसे कठिन कार्य को करने की क्षमता रखता है।

ठीक ऐसे ही साधक की बुद्धि जब अन्तःप्रज्ञा में रूपान्तरित हो जाती है, तो यह सत्य और भ्रम को पृथक करने की सामथ प्राप्त कर लेती है। ऐसी अन्तःप्राज्ञिक बुद्धि ही देवी सरस्वती का वाहन–हंस है। इसलिए जब व्यक्ति की बुद्धि परिशुद्ध हो

जाती है तो उसके व्यक्तित्व में देवी सरस्वती का प्रवेश हो जाता है। और उनकी दिव्य विभूतियां उस व्यक्ति के माध्यम से प्रकट होने लगती हैं।

ज्ञान की देवी माता सरस्वती आपको अपने अहंकार की परिसीमा से ऊपर उठा कर भावातीत और अनन्त आयाम में प्रवेश करने में आपकी सहायता क्रती हैं। आप जिस पल परिसीमाओं के घेरे को तोड़ कर अनन्त विस्तार में देखने की क्षमता पा लेते हैं, उसी क्षण आप की सृजनात्मक प्रतिभा प्रकट हो जाती है। जब आप की प्रतिभा विकसित हो जाती है और आप ज्ञान और कला के किसी भी क्षेत्र में उत्कृष्टता प्राप्त कर लेते हैं, तो यह माना जाता है कि आप पर सरस्वती की कृपा है।

देवी सरस्वती सभी प्रकार के ज्ञान प्रदान करती हैं। इस जगत में जो भी अच्छा और अद्भुत है, उसका स्रोत्त ज्ञान है। सच्चे ज्ञान से आपकी चेतना में विस्तार होता है। जीवन के समस्त दुःख और बुराइयाँ चेतना की संकीर्णता के कारण ही उत्पन्न होती हैं। अन्त में देवी सरस्वती अविद्या रूपी आवरण को विछिन्न कर साधक को ब्रह्माण्डीय चेतना की भव्यता और गरिमा को उद्धाटित कर देती हैं। परम सत्य की अनवर्चनीय सुन्दरता की अनुभूति से अमरत्व की प्राप्ति होती है।

इस प्रकार नवरात्रि पूजा के अवसर पर देवी की दिव्य महिमा पर चिन्तन करते हुए हम देखते हैं कि वे अपनी सन्तान (साधक) का मार्गदर्शन करने के लिए असंख्य रूपों में

अभिव्यक्त होती हैं और उसके अन्तर्वाह्य विकास का मार्ग प्रशस्त करती हैं। समस्त प्रकृति उन की क्रीणास्थली है और पृथ्वी तथा स्वर्ग सहित ब्रह्माण्ड की समस्त अभिव्यक्तियां उन की दिव्य महिमा के अंग हैं। जीव को मार्ग निर्देशित करने की उनकी अलौकिक विधि अत्यन्त रहस्यमय और गुह्य है। फिर भी ममता और करुणा से परिपूर्ण दिव्य माता, प्रेम तथा स्नेह के अनन्त सागर हैं।

दुर्गा के रूप में देवी की प्रथम अभिव्यक्ति में व्यक्तित्व के अवांक्षनीय और निकृष्ट तत्वों के विनाश का कार्य प्रसन्नत्ता पूर्वक लिया जाता है। माता लक्ष्मी के रूप में देवी की दूसरी अभिव्यक्ति के माध्यम से भव्य भवन का शिलान्यास और नव निर्माण का कार्य किया जाता है।

देवी की तीसरी और अत्यन्त उत्कृष्ट अभिव्यक्ति माता सरस्वती के अवतरण के साथ ही उपवन में पुष्प खिल जाते हैं और वृक्षों पर मधुर फल लग जाते हैं। जीवात्मा नवीन प्रासाद के वातायन से दिक्काल तथा सापेक्ष जगत के दुःखों से ऊपर उठकर परमात्मा (ब्रह्मन्) की भावातीत (परात्पर) महिमा की झलक लेने लगता है। आत्मसाक्षात्कार के रूप में यह देवी पूजा का चरमोत्कर्ष है जिसे विजयदशमी के प्रतीक रूप में समारोह पूर्वक मनाया जाता है। नवरात्र पूजा के दसवें दिन सभी असुरों पर देवी की विजय का यह परिचायक है।

आध्यत्मिक विजय की प्राप्ति

दुर्गुणों के असुरों को पराजित करने तथा देवी के साथ संयुक्त होने के लिए साधक यथा संभव सद्गुणों का विकास करते हुए सदाचार का पालन करता है। विषमतम अवस्था में भी आप को अपने मन में ईर्ष्या, द्वेष और विकृत भावों को नहीं उठने देना चाहिए। आपके माध्यम से क्रियाशील दैवी शक्तियों की सहायता से देवी ने आप की जिस विजय को सुनिश्चित कर दिया है, उसे पहचानिए। प्रेम की शक्ति कभी–कभी बहुत मन्द पड़ती प्रतीत होती है। परन्तु अन्ततः उसकी विजय हुआ करती है। ज्ञान और बुद्धिमता की शक्तियां इसके साथ संयुक्त हो जाती हैं।

यदि आप का मन इस चेतना से भर जाए कि आप का जीवन देवी की कृपा से ओतप्रोत है और आप के चतुर्दिक विद्यमान जगत में देवी की महिमा व्याप्त है, तो एक महान

चमत्कार घटित होता है। देवी आप के मन के ऊपर पड़ा हुआ भ्रम का आवरण समाप्त कर देती हैं। संसार को आप तब अपने प्रबुद्ध मन की सहायता से एक दूसरी दृष्टि से ही देखने लगते हैं। यह जगत दिव्य महिमा का अनन्त सागर बन जाता है। यही आपके जीवन की परम विजय हो जाती है।

जीवन में कभी–कभी ऐसा भी होता है कि आप विजय के बिल्कुल समीप होते हैं, परन्तु अधीरता के कारण आप अचानक उस से अपना मुँह मोड़ कर दूर हो जाते हैं। अधीरता पराजय का ही एक दूसरा रूप है। यदि आप में संलग्नता और सहनशीलता है तो ईश्वरेच्छा से आप जिस भी अवस्था में क्यों न हों,। देवी आपके लिए विजय जीत लेती हैं।

आप थोडी–थोड़ी प्रति दिन विजय प्राप्त करते हैं। आपके समक्ष निराशादायक परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं। आप की सुरक्षा को समाप्त करने वाली घटनायें घटती हैं आप के अहंकार में विक्षेप उत्पन्न करती हुई भावनाओं को आहत करने की स्थितियाँ आती हैं। यदि इन परिस्थितियों में भी आप सतत अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते रहें, इन की पीड़ाओं और आवेगों को सहज और शान्त मन से सहते रहें और सन्तुलित मन और असीम धैर्य के साथ अपने मार्ग पर आगे बढ़ते रहें, तो आप देखेंगे कि देवी माता आप के जीवन में अद्‌भुत चमत्कार कर रही हैं। यदि आप दीर्घकाल तक अपनी दिशा बनाए रखेंगे तो आप देखेंगे कि आपके प्रति की गयी घृणा प्रेम में रूपान्तरित

हो गयी है और क्रूरता के स्थान पर करुणा और समझदारी स्थापित हो गयी है। वास्तव में ये सभी विजयी स्थितियाँ हैं जो कालान्तर में जीवन की सर्वोच्च विजय—अविद्या की समाप्ति के रूप में आप को प्राप्त होती हैं।

नवरात्र पूजा के दसवें दिन इसी विजय का उत्सव मनाया जाता है। दसवें दिन देवी द्वारा असुरों पर की गयी रहस्यमय विजय, स्मरणोत्सव के रूप में ही विजयदशमी, पर्व मनाया जाता है। इसी दिन भगवान श्रीराम ने देवी की आराधना करके असुरों के साथ अपना विजयी संग्राम आरंभ किया था। अनादि काल से ही भारत में इस दिन को अत्यन्त पवित्र दिन माना जाता है। इस दिन जीवन के महत्वपूर्ण कार्यों का शुभारंभ करने की भी म्परा रही है।

अपने दैनिक जीवन में देवी की आराधना करें

देवी की महिमा का चिन्तन करने के लिए नवरात्र के नौ दिन और नौ रात साधना के लिए एक अदभुत अवसर प्रदान करते हैं। परन्तु व्यक्ति को चाहिए कि वर्ष के प्रति दिन माता की रूपान्तरकारी उपस्थिति की चेतना बनाए रखें। अपने विचार और कर्मों के द्वारा देवी की सतत आराधना करते रहने से व्यक्ति को असीम शक्ति और आनन्द तो प्राप्त होता ही है, इसके साथ–साथ आत्मसाक्षात्कार के लक्ष्य की ओर उसकी प्रगति भी तीव्रा हो जाती है।

देवी दुर्गा की आराधना

व्यावहारिक स्तर पर देवी दुर्गा की आराधना का अर्थ जीवन की विषम और विध्वंसात्मक परिस्थितियों के प्रति एक विशेष प्रकार की भावना बनाना है। प्रकृति की प्रत्येक क्रिया में आप जहाँ–जहाँ अपनी दृष्टि ले जाते हैं, आप को विध्वंस

और विनाश में भी एक सुन्दरता दिखायी पड़ती है। एक मोमबत्ती जलती है और इसके विनष्ट होने के कारण प्रकाश फैलता है। बीज के गलने से सुन्दर अंकुर जो आगे चल कर वृक्ष बनता है, विकसित होता है। यदि जीवन में विनाश और विध्वंस न हो, तो इसमें खुशी और आनन्द के क्षण नहीं होंगे। क्योंकि तब परिवर्तन और परिवर्द्धन की कोई संभावना नहीं रह जाएगी।

आप किसी वस्तु अथवा परिस्थिति के पाने की तीव्र इच्छा करते हैं और किसी कारणवश यदि आप की इच्छा की पूर्ति नहीं होती है, तो आप को दुःख में डूब नहीं जाना चाहिए। दुर्गा माता कभी गलती नहीं करती। बीमारी, प्राकृतिक विपदा दुर्घटना या मृत्यु के कारण आप को यदि विपत्ति का आभास होता है, तो आप को ऐसी कला सीखनी चाहिए जिससे आप इन परिस्थितियों के मूल में ईश्वरेच्छा को क्रियाशील देख सकें। पीड़ा और विक्षोभ से दार्शनिक अन्तर्दृष्टि का उदय हुआ करता है। प्रत्येक परिस्थिति अथवा घटना के पीछे एक दिव्य ईश्वरीय योजना है। जीवन की विषमताओं और विपत्तियों के मध्य भी उस व्यक्ति के प्रति दिव्य ईश्वरीय भाव, उसके कल्याण और करुणा का ही रहता है।

मानवी सम्बन्धों में जब कभी आपके बारे में लोगों को गलत फहमी होती है और आप को प्रताड़ित किया जाता है, फिर भी आप को उन लोगों के प्रति, जो लोग ऐसा करते हैं, कोई दुर्भाव नहीं रखना चाहिए। इसके विपरीत, आपको यह अनुभव करना चाहिए कि प्रत्येक व्यक्ति देवी के हाथो की कठपुतली

हैं। देवी आप की सहनशीलता और धैर्य की परीक्षा ले रही हैं। इन परिस्थितियों में सहनशीलता और धैर्य बनाए रखते हुए आप देवी की आराधना कर रहे हैं। देवी अपनी आराधना के लिए केवल उपवन के कोमल पुष्पों की ही चाहना नहीं करती। बल्कि वे आपके हृदय में प्रष्फुटित धैर्य, सहनशीलता, क्षमा, उदारता, संलग्नता और सभी परिस्थितियों में सदा समान बने रहने वाली आध्यात्मिक प्रगति के पुष्पों की भी चाहना करती हैं।

साधक को शान्त और सन्तुलित मन से विपत्तियों का सामना करते हुए देवी के विध्वंसात्मक रूप की आराधना करने की कला सीखनी चाहिए। उसे ऐसी स्थिति में न तो निराश होना चाहिए और ना ही क्षुब्ध। आप को यह अच्छी तरह जान लेना चाहिए कि आप की अन्तरात्मा में इतनी शक्ति है कि वह सभी प्रकार की विषमताओं और द्वंद्वों को अत्यन्त सफलता से सामना कर सके। और ऊँची दृष्टि से यदि हम देखें तो पायेंगे कि मानव मन जब किसी परिस्थिति विशेष को ठीक तरह नही समझ पाता है, तो उसे विषम अथवा विपत्ति कह देता है। आप तनिक गहराई से विचार कर के देखें आप पायेंगे कि अपनी परिवक्वता, शक्ति और समझदारी के लिए आप अपनी विषम परिस्थितियों के कितने ऋणी हैं। इसलिए जीवन की कोई स्थिति विषम नही होती। किसी भी घटना को विपत्ति नहीं कहा जा सकता। यदि आप इस प्रकार सोचना और देखना सीख लेते हैं, तो आप उन्नत स्तर की देवी आराधना कर रहे हैं।

इस प्रकार विध्वंसक रूप में देवी दुर्गा की आराधना का अर्थ विषमताओं को अवांक्षनीय मानते हुए उस से दूर भागने के बदले, उसका स्वागत करना है, उस कष्टदायी परिस्थिति में भी गहन अन्तर्दृष्टि और गुप्त ईश्वरीय संदेश को उद्‌घाटित करना है। इसका अभिप्राय यह नहीं है कि आप जानबूझ कर अपने जीवन में विपत्तियों को आमंत्रित करें। क्यों कि ऐसा करना अस्वाभाविक और अप्राकृतिक होगा। सामान्यतः आप का प्रयास यही होना चाहिए कि अपने जीवन में आप यथा संभव विषमताओं और विपदाओं को कम करें। परन्तु आपके सर्वाधिक प्रयास के बाद भी आप के जीवन में अनिवार्य रूप से अनेक प्रकार की विपदायें आयेंगी। क्योंकि यह जीवन का नियम हैं इन विपत्तियों का सामना करते समय इन के मूल में विद्यमान दिव्य संदेश और अर्थ को ग्रहण करने की कला सीखिए।

उपनिषदों ने यह बार–बार कहा है कि साधक को जीवन की सभी कठिन और विषम परिस्थितियों में तप भावना विकसित करने का अभ्यास करना चाहिए। यदि तप के बारे में आप की ऐसी विस्तृत धारणा होगी तो आप को अन्य किसी भी प्रकार का तप करने की आवश्यकता नहीं होगी। आप का जीवन तप करने की ऐसी असंख्य परिस्थितियां प्रस्तुत करता है। उन परिस्थितियों का समुचित ढंग से सामना करना विस्तृत दृष्टिकोण से दुर्गा देवी की प्रभावशाली पूजा है।

विध्वंस का समादर करने का यह अर्थ भी है कि अपने व्यक्तित्व की ऋणात्मक वृत्तियों को समाप्त करने के लिए आप

सदा तत्पर रहें। काम, क्रोध, लोभ, मोह जैसी बुरी वृत्तियाँ जिनसे आपका व्यक्तित्व छिछला और सतही स्तर पर ही बना रहता है, को समाप्त करने के लिए देवी की कृपा की प्रार्थना कीजिए। आप को इन बुराइयों के खोखलापन को देखने तथा उनके प्रति अरुचि (घृणा) उत्पन्न करने के लिए सदा तैयार रहना चाहिए। जिस के कारण आप का अधःपतन होता है। ऐसे दुर्गुणों के प्रति यदि आप में घृणा उत्पन्न होती है तो इसका यह अर्थ हुआ कि आप देवी की कृपा प्राप्त कर रहे हैं और यह एक अत्यन्त महान उन्नत्ति है।

आप यदि अपने व्यक्तित्व की ऋणात्मक वृत्तियों को पूर्णतः समाप्त करने में सफल नहीं भी हुए हों, परन्तु यदि आप ऐसा अनुभव करते हैं कि ये दुर्गुण आप के व्यक्तित्व में नहीं होना चाहिए, तो यह भी दिव्य कृपा प्राप्त होने का ही लक्षण है। अपने व्यक्तित्व में विद्यमान सभी दुर्गुणों और ऋणात्मक वृत्तियों को पहचानने की सामर्थ्य आप में होनी चाहिए। आप को यह भी समझ लेना चाहिए कि ये सभी विकृत्तियाँ आप के वास्तविक स्वरूप के स्थाई अंग नहीं हैं। ये सभी आरोपित और अस्थाई हैं। यदि इस प्रकार की समझ आप में आ गयी है, तो आप देवी की कृपा प्राप्त कर रहे हैं। चाहे कितना भी समय क्यों न लग जाए, आप निश्चित रूप से उन्हें अपने व्यक्तित्व से निर्मूल कर देंगे।

देवी लक्ष्मी की आराधना

भगवती लक्ष्मी की सच्ची आराधना—जो केवल आनुष्ठानिक नहीं, बल्कि आपके जीवन में गहराई से व्याप्त है, करने का प्रथम कदम इस ब्रह्माण्ड और आपके व्यक्तित्व में क्रियाशील सृजनात्मक शक्तियों का समादर करना है। शरीर, मन, इन्द्रियां, बुद्धि और अचेतन में बन्द अनन्त मानसिक शक्ति के रूप में जो आप को अद्‌भुत वरदान मिला है, उस पर विचार कीजिए। आप इन वरदानों की सहायता से क्या कर सकते हैं, इसके विषय में गहराई से सोचिए। इन के सहयोग से जीवात्मा जीवन में सृजन की एक अद्‌भुत प्रक्रिया आरंभ कर सुख, समृद्धि, सफलता और आनन्द की अकल्पनीय परिस्थितियां निर्मित कर सकता है।

देवी लक्ष्मी की सच्ची आराधना करने के लिए व्यक्ति को अपने जीवन में सद्‌गुणों के सुगन्धित फुलवारी विकसित करने का अहर्निश प्रयास करते हुए वाह्य जगत में दिव्य गुणों को प्रोत्साहित, परिवर्धित और पहचान करते रहने की आवश्यकता है।

शास्त्रों के अनुसार आठ प्रकार की लक्ष्मी होती हैं; **धन**, **धान्य** (आहार), **धैर्य**, **विद्या**, **जया** (विजय), **वीर्य** (शक्ति), **गज** (ऐश्वर्य) और **सौभाग्य**। लक्ष्मी की उपरोक्त आठ अभिव्यक्तियों के प्रति सही भाव विकसित करके लक्ष्मी देवी की प्रभावशाली आराधन की जाती है।

इन में सबसे प्रथम धन और सम्पत्ति के प्रति सम्यक् भाव विकसित करना है। यदि धन को सही ढंग से उदारता पूर्वक मानव सेवार्थ प्रयुक्त किया जाय तो भौतिक सम्पदा परमार्थ, ह्रदय की विशालता, अच्छाई करुणा और सदभावना को बढ़ाने का प्रभावशाली माध्यम बन सकती है। दूसरी ओर धन के गलत प्रयोग से स्वार्थपरता, अहंकार, क्रूरता, कृपणता, संकीर्णता और दुःख में वृद्धि होती है। जब ऐसा होता है तो भौतिक दृष्टि से आप भले ही समृद्ध हो सकते हैं, परन्तु आध्यात्मिक दृष्टि से वास्तव में आप का धन आपको कंगाली की ओर ले जा रहा है।

लक्ष्मी आराधना की दूसरी पहचान आपके द्वारा ग्रहण किए जाने वाले आहार के प्रति सम्मान और समादार की भावना को विकसित करना है। आप को जो भी भोजन प्राप्त हो रहा है, उसके लिए परमेश्वर (माता लक्ष्मी) को धन्यवाद दीजिए। क्योंकि उस आहार से आप के शरीर और जीवन को पोषण प्राप्त हो रहा है। इसलिए, जो आहार आप लेते हैं न तो उसका अपमान कीजिए और ना ही उसको बर्बाद कीजिए। क्योंकि आप के द्वारा फेंका हुआ भोजन किसी और के काम आ सकता है।

लक्ष्मी पूजा की तीसरी विधि धैर्य का विकास है। जीवन में मानव जो भी महान और यशस्वी उपलब्धि करता है, उसका यही मूलाधार है।

ज्ञान का सम्मान करना लक्ष्मी पूजा की चौथी विधि है। ज्ञान के दो पहलू हैं: एक जिस के द्वारा आप संसार में सफलता पाते हैं और दूसरा जिसकी सहायता से आप को आध्यात्मिक प्रबुद्धता प्राप्त होती है। लक्ष्मी देवी की आराधना से इस प्रकार का ज्ञान प्राप्त होता है।

देवी पूजा का अगला पहलू जीवन में प्राप्त विजय का सम्मान करना है। विजय के माध्यम से प्रेरणा मिलती है और प्रेरणा के द्वारा आप जीवन–संग्राम को वीरता पूर्वक लड़ने की सामर्थ्य पाते हैं। यदि व्यक्ति सचेत नहीं हैं, तो छोटी सी पराजय से ऋणात्मक संस्कार उत्पन्न हो सकते हैं, जिनसे उसका अचेतन मन बोझिल हो सकता है। परन्तु आप की प्रत्येक विजय (चाहे वह कितनी भी छोटी क्यों न हो), आप में आत्मविश्वास का संचार करती है। जिससे आप उत्साहित होकर और आवेग से आगे बढ़ते हैं।

देवी लक्ष्मी की पूजा का छठा पहलू शक्ति और प्राण ऊर्जा का विकास और समादर करना है। क्योंकि दुर्बल मन और रोगी शरीर से कुछ भी प्राप्त नहीं किया जा सकता।

सातवां ऐश्वर्य का विकास है। इसका दूसरा अर्थ यह है कि अपने व्यक्तित्त्व को ऐसा विकसित करें जिससे श्रेष्ठ कार्य हों, जिससे आपके आन्तरिक जीवन और वाह्य जगत में समता,

सुख, शान्ति और सामंजस्य बढ़े और राजा (शासन) आप का सम्मान करें।

लक्ष्मी के आठवें रूप की पूजा करने का अर्थ समग्र रूप से अपना सौभाग्य बढ़ाना है। सौभाग्य के दो रूप हैं: नाशवान और अमर। दिव्य गुण, शुभ संस्कार और सद्कर्मों के रूप में अमर सौभाग्य आता है। इसकी पहचान एक ऐसे मन के उदय से होती है जो तनावरहित, सहज और समग्र रूप से समुन्नत्त तथा संतुलित हो।

नश्वर सौभाग्य को भी उपार्जित करने के लिए धर्मावलम्बित जीवन होना चाहिए। धन, सम्पत्ति, पैसा, परिवार और समाज में मधुर सम्बन्ध, मित्र, परिजन, प्रभुता, सम्मान और यश ये सभी नश्वर सौभाग्य हैं। यह सौभाग्य आध्यात्मिक गुण तथा ज्ञान प्राप्ति के साधन बन सकते हैं। यदि आप इस नश्वर सौभाग्य को ही अन्तिम उपलब्धि मान कर इन्हें पाने के प्रयास में संलग्न हो जाते हैं, तो आप देवी लक्ष्मी की कृपा पाने की पात्रता खो देते हैं। यदि आप गहन तृष्णा और तीव्र अहंकारिक इच्छा से किसी वस्तु को पाना चाहते हैं, तो उनके प्राप्त होने पर भी वे आप का त्याग कर देती हैं। वे चीजें आप के पास रहेंगी। परन्तु उनके कारण आपके मन पर सदा एक दबाव बना रहेगा। वे आप के लिए दुःख, कष्ट और पीड़ा का कारण बन जाएंगी।

इसके विपरीत, यदि आप समृद्धि और सौभाग्य आने के साथ अहंकारिक संलग्नता को समाप्त कर देंगे तथा वस्तुओं

को इस लिए उपार्जित करेंगे क्योंकि जीवन चलाने के लिए आप को उनकी आवश्यकता है, तो आप सच्चे अर्थों में समृद्ध और खुशहाल हो जायेंगे। आप की जो भी उपलबिध होगी उसका उपयोग आप अपनी आध्यात्मिक प्रगति के लिए कर सकेंगे।

देवी लक्ष्मी की पूजा करने का अर्थ इस सत्य को अच्छी तरह समझ लेना है कि आपके पास जो सम्पत्ति और धन आ रहा है उसके आप स्वामी नहीं, बल्कि देख–रेख करने वाले एक संरक्षक–न्यासी हैं। सही ढ़ंग से सम्पत्ति का उपयोग कीजिए। आप को लक्ष्मी की कृपा प्राप्त होगी।

जब कभी आप के जीवन में सुखद और अनुकूल परिस्थिति आये, जब भी आप को धन–सम्पत्ति की प्राप्ति हो, आप देवी लक्ष्मी का स्मरण कीजिए। उस परिस्थिति में और अधिक विनम्र बनिए। क्योंकि जिस पल आप विनम्र होने के बदले अहंकारी हो जाएंगे, उसी पल लक्ष्मी देवी अपनी कृपा खींच लेंगी। जो सम्पत्ति आप की भलाई कर सकती थी, वही आप के विपरीत हो जाएगी।

भारत के कुछ भागों में लक्ष्मी की सवारी उल्लू दिखाया गया है। इसका यह अर्थ है कि जिसके मस्तिष्क का संचालन धनसम्पत्ति के द्वारा होता है (अर्थात जिसके मन–मस्तिष्क पर धन का गुरूर होता है), वह ऊल्लू बन जाता है। उसे दिखाई नहीं पड़ता। वह सही और गलत में भेद नहीं कर पाता। इसके विपरीत, यदि अपने जीवन में आध्यात्मिक मूल्यों को बढ़ाने

के लिए आप अपनी धनसम्पत्ति का उपयोग करते हैं, तो लक्ष्मी गरूड़ की सवारी करती हैं। इनकी कृपा से आप भावातीत के अनन्त आयाम में ऊँची उड़ान मरने लगते हैं।

देवी सरस्वती की आराधना

पारम्परिक रूप में देवी सरस्वती के हाथ में वीणा दिखाया गया है। वीणा एक ऐसा वाद्ययंत्र है जिस के तारों को सही ढ़ंग से कसने और मिलान करने पर उससे निकलने वाला सुर निर्भर करता है। वीणा की तरह ही मानव–व्यक्तित्व के सभी तारों को सही ढ़ंग से कसते हुए उसे समंजित करने की आवश्यकता होती है। इसी स्थिति में आत्मा की सुन्दरता उस व्यक्ति के जीवन के माध्यम से प्रकट हो सकती है। इसलिए देवी सरस्वती की सतत आराधना करने का एक प्रमुख पक्ष यह है कि आप अपने दैनिक जीवन में सदा समता, समरसता, और समंजन को विकसित करते रहने का प्रयास बनाए रखें।

अपने जीवन को आप कभी असंतुलित नहीं करें। आप जो भी करें उसमें एक लय, समरसता और सुन्दर तालमेल होना चाहिए। जब आप अपने व्यावहारिक जीवन में प्रतिदिन कुछ समय के लिए ध्यान, कुछ समय तक जप–प्रार्थना, कुछ समय की सेवा और सत्संग का सम्यक समावेश करेंगे तो आप के व्यक्तित्व के माध्यम से दिव्य प्रेरणा और उत्साह का संचार

होने लगेगा। आपके अचेतन मन में उन्नत्त और शुभ उत्पन्न होने लगेंगे, जिसके कारण आपकी बुद्धि में प्रसुप्त अन्तः प्राज्ञिक संभावना और दिव्य शक्तियों का विकास आरंभ हो जाएगा।

आप को तब यह अनुभव होने लगता है कि जीवन का एक निश्चित अर्थ है तथा प्रत्येक दिन एक विशेष संदेश लेकर आता है। प्रत्येक दिन आप को नवीन उपलब्धि के लिए नूतन अवसर प्रदान करता है। इसलिए जीवन में कभी भी उबाउपन नहीं आता। यह कभी बोझिल नहीं हुआ करता। आप शक्ति से परिपूर्ण हो जाते हैं और आपके व्यक्तित्व की सम्पूर्ण ऊर्जा आध्यात्मिक समझ बढ़ाने और ज्ञान की प्राप्ति के महान उद्देश्य में प्रयुक्त होने लगाती है। मानव व्यक्तित्व के ये सर्वोच्च गुण हैं जीवन की ऐसी कोई भी समस्या नहीं है, जिसका समाधान इन से न हो।

उन्नत्त आध्यात्मिक प्रज्ञा और सापेक्षिक भौतिक ज्ञान, देवी सरस्वती के आशीर्वाद से प्राप्त होता है। इसके लिए आभार और कृतज्ञता का भाव विकसित कर आप देवी सरस्वती की आराधना कर सकते हैं। अधिक से

अधिक विद्या सीख कर और मानवता की अधिकाधिक सेवा के लिए अपने व्यक्तित्व को तैयार कर के आप माता सरस्वती की आराधना सापेक्षिक स्तर (भौतिक) पर करें। आपके मन में जब भी कोई नयी प्रेरणा का उदय होता है, कवित्व शक्ति जागृत होती है, दार्शनिक अन्तर्दृष्टि विकसित होती है अथवा व्यापार बढ़ाने की कोई नयी युक्ति सूझती है, तो यह अनुभव कीजिए कि देवी सरस्वती की कृपा प्राप्त हो रही है। इसके लिए अपने अहंकार को नहीं वरन्, देवी सरस्वती को धन्यवाद दीजिए।

आध्यत्मिक स्तर पर शास्त्रों के गुह्य रहस्यों को समझने और आत्मसाक्षात्कार करने की प्रेरणा विकसित करने के लिए देवी सरस्वती की कृपा और सहायता के लिए प्रार्थना कीजिए। इस प्रकार का ज्ञान बौद्धिक नहीं होता है। बल्कि इससे आपकी बुद्धि का रूपान्तरण अन्तःप्रज्ञा में हो जाता है। इस ज्ञान से आप अपने ब्रह्म स्वरूप की अनुभूति कर माया से मुक्त हो जाते हैं।

सरस्वती देवी की दैनिक आराधना का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पहलू वाणी संयम है। यह देवी की प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति है। बोले जाने वाले शब्द मधुर और दूसरों को प्रसन्न करने वाले होने चाहिए। इनसे असंतुलन और तनाव नही बढ़ना चाहिए और ना ही यह दूसरों को चोट पहुँचाने वाला होना चाहिए। यदि आप अपनी वाणी का दुरूपयोग करते हैं, तो आप

सरस्वती देवी को अप्रसन्न कर रहे हैं। यदि आप की आवाज़ मधुर है और आप वाणी संयम नहीं करते, तो धीरे–धीरे मधुर आवाज की जगह कर्कश आवाज ले लेगी। जिसका यह अर्थ हुआ कि देवी सरस्वती ने मधुर वाणी के रूप में जो अपनी कृपा आप पर बरसायी थी उसे वापस ले लिया।

वाणी संयम के लिए मन को संयमित करना अत्यन्त आवश्यक है। यदि आप दूसरों के प्रति दुर्भावना और गलत विचार रखेंगे, तो आपकी वाणी आप के नियंत्रण में नहीं रह सकती। आप का मूड इस प्रकार बदलता रहेगा कि आप के मुँह से एक ऐसी कड़वी बात अपने आप निकल जाएगी जिसके लिए आपको पीछे पछताना पड़ेगा। इसके विपरीत, यदि आप अपने मानसिक स्तर पर सद्विचार तथा सदभाव बनाए रखेंगे तो आप जो भी बोलेंगे वह मधुर और प्रिय होगा।

इसके अतिरिक्त आप को अच्छी तरह यह समझ लेना होगा कि यदि आप अपने विचार तथा भावनाओं का दुरूपयोग करते हैं, दूसरों के प्रति हिंसा और दुर्भाव के विचार प्रेषित करते हैं, तो आप का मन सदा उलझा हुआ रहेगा। आप कभी निर्द्वंद्व नहीं हो सकते। किसी भी विषय पर आप की सोच स्पष्ट नहीं हो सकती है। देवी सरस्वती के अप्रसन्न होने के कारण आप के विवेक की प्रखरता समाप्त हो जाती है।

संसार के समस्त कार्य बोली हुयी वाणी पर निर्भर करते हैं। और वाणी का सम्बन्ध विचारों से है। जिनकें विचार शक्ति

शाली होते हैं, उनकी वाणी में भी शक्ति होती है। सद्विचार और मधुर वाणी के माध्यम से देवी सरस्वती की गहन आराधना होती है। जब सरस्वती की सम्यक ढंग से पूजा होती है तो आप की चेतना में तब तक विस्तार होता जाता है, जब तक कि आप "अहंब्रह्मास्मि"— मैं ही ब्रह्मन् हूँ की अनुभूति न कर लें।

इस प्रकार देवी पूजा का यह संदेश है कि आपका जीवन न केवल नवरात्रि के समय देवी माता के चरणों में समर्पित हो, बल्कि जीवन के प्रत्येक दिन, प्रत्येक पल को उनके चरणों में अर्पित करना है। यह जगत दिव्य है। देवी इस ब्रह्माण्ड के प्रत्येक कण में व्याप्त हैं। वे आप के अन्तर्मन और वाह्य जगत में सदा विद्यमान रहती हैं। आप सदा माता के अंक में सुरक्षित रहते हैं। इस प्रकार आनन्द पूर्वक विकास का जीवन व्यतीत करें तथा भ्रम का जाल फैलाने और द्वैतभाव का द्वंद्व उत्पन्न करने वाले असुरों पर देवी माता की विजय होते देखते हुए आत्मसाक्षात्कार के रूप में परम विजय प्राप्त कीजिए।

नवरात्रि पूजा में प्रतिदिन के लिए मनन करने योग्य विचार

देवी दुर्गा की आराधना

✤

प्रथम रात्रि

✤ देवी दुर्गा अनन्त दिव्य शक्ति की अभिव्यक्ति हैं। वे सभी विघ्नबाधाओं को करने वाली माता हैं। सिंह पर सवार हो कर भीषण युद्ध करते हुए भी उनके मुखमण्डल पर एक अलौकिक दिव्य मुस्कान फैली रहती है। इस प्रकार अत्यन्त भीषण और विध्वंसात्मक कार्य करते समय भी वे शुभ, सौंदर्य और कल्याण के सागर हैं।

✤ विध्वंस, सृजन और उद्‌घाटन ये तीन आध्यात्मिक प्रक्रिया के प्रमुख अंग हैं। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार और द्वेष के विध्वंस के बाद शुभ वासनाओं का निर्माण कर, परिशुद्ध चित्त में आत्मा को उद्‌घाटित करना चाहिए।

✤ अपने व्यक्तित्व के प्रत्येक अंग में देवी की उपस्थिति का अनुभव कीजिए। देवी ही स्वयं को बुद्धि, मन, इन्द्रियां, शरीर और आध्यात्मिक विकास के लिए आवश्यक भौतिक संसाधन के रूप में अभिव्यक्त करती हैं। इस चेतना को बनाए रखने का प्रयास कीजिए कि आप माता की दिव्य गोद में सदा सुरक्षित हैं।

✤ देवी दुर्गा का सच्चा उपासक बनने के लिए प्रकृति में वाह्य रूप से क्रियाशील भूकम्प, तूफान, बाढ़ और अन्य प्राकृतिक प्रकोप और आन्तरिक रूप से निराशा, चिन्ता, उत्तेजना और विभि॰ प्रकार के भ्रमों के रूप में क्रियाशील विध्वंसात्मक शक्तियों का सामना करना सीखिए। इन सभी घटनाओं के पीछे एक दिव्य आध्यात्मिक अर्थ और उद्देश्य छुपा हुआ है।

✤ विनाश उतना दुःखद नहीं है जितना प्रतीत होता है। नया भवन निर्मित करने के लिए पुराने खण्डहरों को तोड़ना आवश्यक होता है। अपने हृदय में छुपाए प्रकाश को प्रसारित करने के लिए एक मोमबत्ती को स्वयं को जलाना आवश्यक है। कोमल अंकुर के बाद विशाल वृक्ष के रूप में विकसित होने के लिए बीज को गलना पड़ता है।

✤ बीमारी, वृद्धावस्था और मृत्यु जैसी पीड़ादायक और दुःखद स्थिति के पीछे देवी की उपस्थिति देखने के कला विकसित करें। इन परिस्थितियों का सामना करते समय तप भाव विकसित करें। तब आप प्रभावशाली ढ़ंग से देवी की आराधना करेंगे।

✤ दुःख और विपत्ति के समय अपने मन में दार्शनिक भाव विकसित करें। पीड़ा से व्यक्ति की आँखे खुल जाती हैं। विपरीत और विषम स्थितियों का सामना करने से आप की गुप्त आध्यात्मिक

शक्तियों का जागरण होता है।

✤ यदि आप अपने मन को काम, क्रोध, लोभ और ईर्ष्या से प्रभावित रखते हैं तो आप कर्म–डोर से बन्धे हुए पशु के समान हैं। आप सांसारिकता के सर्पिल रास्ते पर जन्म–जन्मान्तर भटकते रहते हैं। परन्तु जब आप देवी की सहायता से इन विकारों पर विजय प्राप्त कर लेते हैं, तो आप पशुपति (सभी पशुओं के स्वामी) के साथ संलग्न हो कर अपने परम ब्रह्म स्वरूप को ज्ञात कर लेते हैं।

द्वितीय रात्रि

✤ अपने व्यक्तित्व में देवी को सम्पूर्ण रूपान्तरण करने दीजिए। काम, क्रोध, द्वेष और अनेक ऋणात्मक प्रवृत्तियों से प्रभावित वही पुराना व्यक्ति बने रहने से सन्तुष्ट नहीं होइए।

✤ अपने लिए दुर्गा को जीवन–संग्राम में लड़ने दीजिए। उनके हाथों में आप केवल एक उपकरण बने रहिए। विजय आप की ही होगी। आपको यह जानना चाहिए कि आप के अन्दर विद्यमान वीर आत्मा के लिए सहजता से प्राप्त विजय अपमान प्रतीत होती है। देवी दुर्गा की सहायता लेते समय आपको अपनी कुशलता, प्रवीणता और वीरता को अभिव्यक्त करना चाहिए।

✤ आप के प्रति जो अपमानित करने वाली कडुवी वाणी बोलते हैं, उन में आप देवी दुर्गा को उपस्थित अनुभव कीजिए। उनके प्रति दुर्भाव रखने के बदले, उन में विद्यमान दुर्गा देवी रूपी परमात्मा को नमन कीजिए जो आप में क्षमाशीलता और सहनशीलता बढ़ाने के लिए अवसर प्रदान कर रही है। आप

माँ दुर्गा

को जो चोट पहुँचाते हैं, उनके प्रति शत्रुता नहीं रखिए। शत्रुओं के नाश के लिए देवी की आराधना नहीं कीजिए। क्योंकि आप का वास्तविक शत्रु बाहर नहीं है। इसके विपरीत अविद्या, अस्मिता, अहंकार, काम, क्रोध और द्वेष के रूप में अन्दर बैठे शत्रुओं को नाश करने के लिए देवी से प्रार्थना कीजिए।

✤ "वाह्य शत्रुओं" को रूपान्तरित करने के लिए देवी की प्रार्थना कीजिए। अपने जीवन में द्वेष और घृणा को बिजयी नहीं होने दीजिए। घृणा के ऊपर प्रेम की विजय होते देखने की किसी भी व्यक्तिगत पराजय के अनुभव से, कहीं अधिक खराब, घृणा की विजय का अनुभव है। क्योंकि इससे आप कर्म बन्धन के एक अनन्त दुष्चक्र में उलझ जायेंगे।

✤ अपनी विपत्तियों से आप शिक्षा ग्रहण कीजिए। करुणामयी माता ही विपत्तियों का मुखौटा पहन कर आप के समक्ष उपस्थित हुयी हैं। इस प्रतिभासी भ्रम के आवरण को उठा कर उनका सौम्य, दीप्तिमान और स्नेहिल मुखमण्डल को देखने की कला सीखिए।

तृतीय रात्रि

✤ देवी वेदान्त द्वारा प्रस्तुत नेति–नेति (यह नही, यह नहीं) की जीवन्त प्रतिमूर्ति हैं। वे सांसारिकता को अस्वीकार करने वाली साक्षात देवी हैं। ज्ञान के द्वारा जब आप अपनी चेतना से इस जगत को पूर्णतः समाप्त कर देते हैं, तो इनकी सर्वश्रेष्ठ ढंग से पूजा होती है।

✤ यदि यह संसार सत्य होता तो इसका विनाश ही क्यों होता? परन्तु, चूँकि यह जगत मिथ्या है, इसलिए ज्ञान के द्वारा

इस के अस्तित्त्व को समाप्त किया जा सकता है। जिस प्रकार प्रकाश के आक्रमण से अंधियारा भाग जाता है, वैसे ही अन्तः प्राज्ञिक ज्योति से ज्योंही मन प्रकाशित हो जाता है, सांसारिक प्रपंच का अंधियारा समाप्त हो जाता है। दुर्गा देवी आपकी चेतना से सांसारिक प्रपंच को समाप्त कर दें।

✤ सांसारिक वस्तुओं के प्रति वैराज्ञ विकसित कीजिए। अनासक्ति की कुल्हाड़ी से अपने चित्त में विद्यमान संसार–वृक्ष को काट डालिए। विध्वंस की आध्यात्मिक प्रक्रिया को अपना कर आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कीजिए।

देवी लक्ष्मी की आराधना

✤

चतुर्थ रात्रि

✤ श्रद्धा, संलग्नता, निरन्तरता, लिए गये कार्य के प्रति एकाग्रित भक्ति, और दृढ़ संकल्प सुख, शन्ति, समृद्धि और सफलता प्राप्ति का रहस्य है। जब आप इन गुणों को अपने व्यक्तित्व में विकसित कर रहे हैं, तो आप सुख और समृद्धि की देवी–लक्ष्मी की आराधना कर रहें हैं।

✤ दान, उदारता और हृदय की विशालता देवी को प्रसन्न करने वाले गुण हैं। इसके विपरीत संकीर्णता, कृपणता और क्रूरता की सभी अभिव्यक्तियां देवी को अप्रसन्न करती है।

✤ भौतिक वस्तुओं का उपार्जन साध्य मान कर नहीं, बल्कि

आध्यात्मिक विकास के लिए साधन मान कर कीजिए। जिनके जीवन में आध्यात्मिक प्रेरणा और मार्गदर्शन का अभाव है, उनके लिए धन एक बोझ बन जाता है। यह आसक्ति, द्वेष, अहंकार स्वार्थपरता और (अलक्ष्मी) अमंगल लाने का माध्यम बन जाता है।

❖ लक्ष्मी की आराधना करें, परन्तु अलक्ष्मी (विपत्ति और दरिद्रता की देवी) से दूर रहें। समृद्धि की देवी का स्वागत करें परन्तु दरिद्रता की देवी का त्याग करें। यदि आप दिल और दिमाग के सद्‌गुणों का विकास करते हैं, तो आप समृद्धि की देवी का स्वागत कर रहे हैं। परन्तु यदि आप काम, क्रोध लोभ मोह, अहंकार, क्रूरता और द्वेष बढ़ा रहे हैं, क्रोध को दूर करना चाहते तो आप विपत्ति की दूरात्मा की पूजा कर रहे हैं।

❖ अनन्त समृद्धि का रहस्य अपरिग्रह—(असंग्रह) में छुपा है। दूसरों की चीजों के लिए लोभ नहीं कीजिए। दूसरों की सम्पत्ति को अनैतिक तरीकों से हड़प नहीं लीजिए। अस्तेय में स्थित रहिए। आप के पास समस्त प्रकार के वैभव वैसे ही आजायेंगे जैसे सागर की ओर नदियां दौड़ी चली आती हैं।

पांचवीं रात्रि

❖ निर्भयता, मन की शुद्धता, भक्ति, ज्ञान, दान, इन्द्रिय संयम, त्याग, स्वाध्याय, तप, आर्जव, अहिंसा, सत्य, अक्रोध, स्वार्थभावना का त्याग, संतोष, परदोष—दर्शन का अभाव, करुणा, चित्त की चंचलता का अभाव, दृढ़ता, शूरता,

माँ लक्ष्मी

सहनशीलता, मानसिक शौच, विनम्रता, द्वेष, घृणा और शत्रुता का अभाव इत्यादि गीता के १६ वे अध्याय में बताए गए दैवी सम्पत्त को बढ़ाइए।

✤ अशौच, अधर्म, झूठ, अविवेक, परमेश्वर में अश्रद्धा, काम, क्रोध, लोभ, अहंकार, चालाकी, पाखण्ड, प्रतिशोध की भावना और दिव्य गुणों के विपरीत जो भी है वे सभी आसुरी सम्पत्त है। अपने व्यक्तित्व से इस आसुरी सम्पत्त को दूर करने का प्रयास कीजिए।

✤ प्रतिपक्षभावना (किसी दुर्गुण के विपरीत जो सद्गुण है उसे स्थापित करना) का अभ्यास कीजिए। मान लें कि आप अपने व्यक्तित्व से क्रोध को दूर करना चाहते हैं तो सर्वप्रथम अपनी क्षमतानुसार क्रोध को रोकने का प्रयत्न करें। इसके बाद क्रोध के विपरीत क्षमा, प्रेम और समझदारी जैसे गुणों को अपने मन के समक्ष रखने का प्रयास करें। दृढ़ता पूर्वक निश्चय करें "मैं प्रेम और सहानुभूति से भरपूर हूँ।" धीरे–धीरे क्रोध का उदात्तीकरण प्रेम में हो जाएगा। इस प्रक्रिया की तीन अवस्थायें: दमन, प्रतिस्थापन और उदातीकरण हैं।

✤ मृत्यु के बाद भौतिक सम्पत्ति आप के साथ नहीं जाती है। परन्तु दैवी सम्पत्त मृत्यु के पश्चात् भी आपके आध्यात्मिक विकास में सहायता करती है।

✤ यदि आप दिव्यगुणों से सम्पन्न हैं, तो इसी जीवन में आप आत्मसाक्षात्कार कर सकते हैं। यदि ऐसा हुआ तो आप सर्वश्रेष्ठ ढ़ंग से देवी लक्ष्मी की आराधना कर लेते हैं। जो योग्य और उचित पात्रता वाले व्यक्ति हैं उन्हें देवी मुक्ति के रूप

में सर्वश्रेष्ठ सम्पत्ति प्रदान करती हैं।

✤ अपने मन को उत्तेजना और तनाव में नही रखिए। हीन भावना को भी प्रश्रय नहीं दीजिए। यदि आप सदा अपने दुःखों की आह भरते रहते हैं तथा अपने वातावरण में कडुवाहट फैलाते हैं, तो आप लक्ष्मी देवी के आशीर्वाद से स्वयं को वंचित कर लेते हैं।

✤ दूसरी ओर, सद्‌गुणों को विकसित कर आप वसंत ऋतु की मधुर बयार बन कर दूसरों के हृदय को प्रफुल्लित करते हैं। आप की उपस्थिति से दूसरों में प्रेरणा और उत्साह जगना चाहिए। आपकी उपस्थिति दूसरों की आशाओं पर तुषारापात न करे, इसका ध्यान रखना चाहिए।

छठी रात्रि

✤ धन और सम्पत्ति की तृष्णा नही कीजिए। ऐसा करके आप अलक्ष्मी के आराधक बन जाते हैं। "कामना के पूर्व पात्रता"—इस सिद्धान्त को सदा बनाए रखना है। यदि सच्चे अर्थों में आप किसी वस्तु अथवा उपलब्धि को प्राप्त करने की पात्रता विकसित कर लेंगे, तो जैसे चुम्बक की ओर लोहा आकृष्ट हो जाता है, वैसे ही वह वस्तु अथवा उपलब्धि आपकी ओर सहज की आकृष्ट हो जाएगी।

✤ दूशावास्योपनिषद् में समृद्धि प्राप्त करने का रहस्य बताया गया है: "तेन त्यक्तेन भुंजिथः मागृधः कस्यस्विदधन्म"—त्यागो और आनन्द करो। दूसरों की सम्पत्ति को नही हड़पो।" त्याग,

देवी लक्ष्मी की सूक्ष्म आराधना है। अहंभाव, "मेरापन " की भावना और स्वामीत्व भाव का त्याग कीजिए। तब आप इस जगत में आन्तरिक मुक्ति के आनन्द से जी सकेंगे। बिना किसी मानसिक व्यग्रता और तनाव के आप के पास सभी प्रकार की सम्पत्ति और धन स्वतः आ जाएंगे।

✤ यदि आप किसी वस्तु को आत्मन् (ब्रह्म) से अलग समझते हुए उसे पाने की इच्छा से उस की ओर उन्मुख होंगे, तो वे वस्तुयें आप से विमुख हो जाएंगी। वृहदरण्यक उपनिषद की ऐसी ही घोषणा है। अपने मन में इस धारणा को गहराई से नहीं स्थापित कीजिए कि आप की प्रसन्नता, वाह्य वस्तुओं पर अवलम्बित है। इसके विपरीत, इस धारणा, को मन में सुदृढ़ कीजिए कि आप स्वरूपतः स्वयं परमानन्द स्वप आत्मन् हैं जो सदा ही सभी प्रकार की निर्भरताओं से मुक्त रहता है। इस प्रकार वस्तुओं के प्रति आपकी धारणा यदि आत्मा की आन्तरिक मुक्ति के भाव से परिपूर्ण है, तो आप को वे (वस्तुयें) घोखा नहीं देंगी। परन्तु, यदि आत्मज्ञान के बिना आप वस्तुओं की ओर अग्रसर होंगे, तो आप भ्रम के संसार में ही भटकते रहेंगे।

✤ अपने अचेतन मन में शुभवासनाओं को बढ़ाते रहिएः—"मैं कौन हूँ? चिन्तन, आत्मान्वेषण, निष्काम सेवा, जप और ध्यान के सतत अभ्यास से शुभ वासनाओं का संचय किया जा सकता है।

✤ काम, क्रोध, लोभः मोह अहंकार जैसी मानसिक विकृतियां और स्वार्थपूर्ण कार्यो से उत्पन्न अशुभ वासनाओं को समाप्त करें।

❖ आप यह नश्वर शरीर नहीं, बल्कि राजाओं के भी राजा परमात्मन् हैं। आप नश्वर भौतिक समृद्धि के रूप में अनात्मिक सम्पत्ति का संचय क्यों करते हैं? जब आप इस नश्वर, क्षण भंगुर और भ्रामक सम्पत्ति को त्याग देते हैं, तो आपको आत्मा की सनातन सम्पत्ति की प्राप्ति होती है।

❖ दूसरों के हृदय में आनन्द का संचार करने वाली बसंत की मधुर वायु के समान बनिये। दूसरों के चित्त को जला देने वाली गर्मी की लू की तरह नहीं बनिए। तभी आप देवी लक्ष्मी की सतत आराधना करने वाले साधक बन सकते हैं।

देवी सरस्वती की आरधना

❖

सातवी रात्रि

❖ विनाश, सृजन और उद्घाटन (प्रकटींकरण) देवी की तीन अभिव्यक्तियों के तीन मूलभूत कार्य हैं। देवी पूजा की योजना में अविद्या द्वारा निर्मित महल को दुर्गा देवी विध्वंस करती हैं। देवी लक्ष्मी साधना के महल का निर्माण करती हैं तथा दिव्य गुणों का सुन्दर उपवन बनाती हैं। देवी सरस्वती महल और सुन्दर फुलवारी पर अपनी सौम्य और स्वर्णिम चाँदनी फैला कर उसे सुशोभित करती हैं।

❖ देवी सरस्वती के हाथ में वीणा नामक एक वाद्य यंत्र है। यह व्यक्तित्व के तारों में सन्तुलन और समता का परिचायक है। आप के व्यक्तित्व से आत्मसाक्षात्कार के दिव्य संगीत को

प्रकट होने के लिए विवेक, भाव, संकल्प और कर्म के तारों को संतुलित और समंजि करना आवश्यक होता है।

✤ वाणी की अधिष्ठात्रि देवी सरस्वती की आराधना मधुर और प्रिय वाणी बोल कर की जाती है। इसके लिए कड़वी, असत्य, और दूसरों को दुःखी करने वाली वाणी न बोलें। यदि आप असत्य, कठोर और पीड़ादायी वाणी बोलते हैं, तो आप देवी को अप्रसन्न कर रहे हैं।

✤ अपनी कही हुयी बातों का सम्मान करना सीखिए। जो वायदा किया जाय उसे अवश्य पूरा करना चाहिए। चूँकि शब्द विचारों से ही उत्पन्न होते हैं, इसलिए आप को सच्चे हृदय से अपने विचारों को पवित्र करने का प्रयास करना चाहिए।

✤ किसी के प्रति भी दुर्भावना नहीं रखिए। सभी प्राणियों के हृदय में देवी विद्यमान हैं। जब आप दूसरों द्वारा अपमानित और पीड़ित हों, तो देवी से सहनशीलता और समझदारी के लिए प्रार्थना करें। देवी की अनुकम्पा से निकृष्टतम व्यक्ति का भी हृदय परिवर्तन हो जाएगा। कठोर हृदय से भी देवी की कृपा से करुणा की पवित्र धारा प्रवहित हो जाएगी।

✤ मानवता की विविध प्रकार से सेवा करने के लिए अनेक प्रकार की प्रतिभा से स्वयं को सम्पन्न कीजिए। ऐसा कर के आप अपने समक्ष अनेक संभावनाओं का द्वार खुलता पायेंगे। इसके विपरीत, यदि आप अपनी प्रतिभा को केवल अपनी स्वार्थपूर्ति हेतु प्रयुक्त करते हैं, तो आपका जीवन ऐसी सरिता के समान हो जाएगा जो प्रसन्नत्ता पूर्वक सागर में समाहित

माँ सरस्वती

होने के बदले, शुष्क और उजाड़ रेगिस्तान में विलीन हो जाती है।

✤ देवी सरस्वती प्रेरणा प्रदान करती हैं। उनकी आराधना से आप जड़ता और निराशा पर विजय पाते हैं। आप को अपने जीवन में किसी प्रकार का बोझ अथवा उबाऊ पन नहीं आता। आप उच्च कोटि की सृजनशीलता में संलग्न हो जाते हैं। क्योंकि देवी आप के व्यक्तित्व के माध्यम से प्रसन्नत्ता पूर्वक वीणावादन करने लगती हैं।

✤ भक्ति और आत्मज्ञान के लिए देवी सरस्वती की प्रार्थना कीजिए। भ्रम और अज्ञान के आवरण को उठाने के लिए देवी की प्रार्थना कीजिए। विद्यादेवी के आराधक बनिए। अपने व्यक्तित्व के माध्यम से अविद्या और इसकी विभिन्न अभिव्यक्तियों को प्रकट नहीं होने दीजिए। देवी सरस्वती को आत्मसाक्षात्कार के रूप में शाश्वत विजय करने दीजिए।

आठवीं रात्रि

✤ देवी सरस्वती की कृपा से आप सत्संग की ओर आकृष्ट होते हैं। गुरु की प्राप्ति, उनसे निर्देश ग्रहण और साधना के प्रति श्रद्धा तथा लगन ये सभी सरस्वती देवी की कृपा प्राप्ति के परिचायक हैं।

✤ साधक की योग्यता विकसित करने का प्रयत्न कीजिए। ये हैं: **विवेक, वैराग्य, षट्सम्पत्त** (शम, दम, उपरति, तितिक्षा, श्रद्धा, और समाधान) तथा **मुमुक्षत्व**।

✤ दो प्रकार की विद्यायें हैं: **अपरा और परा।** अपरा (निम्न) विद्या व्यावहारिक जीवन को चलाने और स्वर्ग प्राप्ति में सहायक है। परन्तु परा (उच्च) विद्या सभी प्रकार के ज्ञानों की पूर्णता है, जिसके द्वारा आत्मसाक्षात्कार किया जाता है।

आत्मज्ञान होते ही सब कुछ ज्ञात हो जाता है। इस पराज्ञान के लिए देवी की प्रार्थना करें।

✤ आपके मन को परिसीमित रखने वाले अज्ञान के असुरों को समाप्त करने के लिए देवी की प्रार्थना करें। चण्ड और मुण्ड (कर्म और अकर्म—मन की वर्हिमुखी और अन्तर्मुखी वृत्तियां), शुंभ—निशुंम (अहंता और ममता) और रक्तबीज (अनात्मिक वस्तुओं की ओर आकर्षण) को समाप्त करने के लिए देवी की प्रार्थना करें।

✤ ब्रह्मन् के विषय में सुनिए। चिन्तन और ध्यान कीजिए। ब्रह्माम्यास (आप वस्तुतः ब्रह्मन हैं इसकी सत चेतना बनाए रखना) कीजिए। देवी की यही सर्वोच्च आराधना है।

✤ चार महावाक्यों— के निहितार्थ पर ध्यान कीजिएः

प्रज्ञानाम् ब्रह्म—चेतना ही ब्रह्म है।

तत्वमसि—तुम वही हो। **अहम् ब्रह्मास्मि**—मैं ब्रह्म हूँ और **अयम् आत्मा ब्रह्म**—यह आत्मा ही ब्रह्मन है।

✤ इसी जीवन में आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने का निश्चय कीजिए। असीम ज्ञान और सम्पत्ति एकत्र करने के बाद भी आप को परमशान्ति नहीं मिल सकती है। आत्मसाक्षात्कार की स्थिति में ही परमशान्ति की अनुभूति हो सकती है। इसलिए इस दिव्य लक्ष्य तक पहुँचने के लिए देवी सरस्वती की कृपा के लिए प्रार्थना कीजिए।

नवीं रात्रि

✤ देवी की सर्वव्यापकता का अनुभव करते हुए बुद्धि, दृढ़ता, करुणा, और विभिन्न प्रकार के सद्गुणों में उसकी पूजा कीजिए। इसके साथ ही तृष्णा, भ्रम, भय, भूख और अन्य दुर्गुणों

में भी उसी को उपस्थित देखते हुए उसकी इन रूपों में भी आराधना करने की कला विकसित कीजिए।

✤ देवी की विभिन्न शक्तियों से ही सांसारिक प्रपंच का खेल निरन्तर चलता रहता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, हिंसा, अहंकार और द्वेष जैसी दुष्ट वृत्तियां भी ईश्वरीय योजना द्वारा प्रयुक्त होती हैं। ये अच्छाई की शक्तियों को महिमा मंडित करती हैं तथा साधकों के विकास के लिए आवश्यक आध्यात्मिक संग्राम की भूमिका तैयार करती हैं।

✤ यद्यपि आप को ऋणात्मक और दुष्प्रवृत्तियों में देवी को अवश्य देखना चाहिए। परन्तु, इन्हें अपने व्यक्तित्व में नहीं बढ़ने देना चाहिए। दूसरों के माध्यम से प्रकट होने वाले द्वेष और क्रोध को देवी के प्रति समर्पण, प्रेम तथा समझदारी के भाव से सामना करना चाहिए।

✤ जब आप काम, क्रोध, द्वेष तथा अन्य दुर्गुणों को अभिव्यक्त करते हैं, तो आप जीवन में आसुरी अभिव्यक्ति करने के लिए देवी के हाथों में एक उपकरण बन जाते हैं। इसके विपरीत, जब आप प्रेम, करुणा और समझदारी विकसित करते हैं तो आप शाश्वत दिव्य संगीत और दैवी शक्तियों की अभिव्यक्तिके माध्य बन जाते हैं।

✤ भ्रम और मोह का भी एक दिव्य उद्देश्य है। कोई व्यक्ति आजीवन अपने पड़ोसी से घृणा करता है। कोई भी उपदेश उसे इस भाव को बदलने में सफल नहीं होता। परन्तु, जब वही पड़ोसी उसके परिवार में एक बालक के रूप में जन्म ले लेता है, तो वह उस शिशु से अत्यधिक प्रेम करने लगता है।

अविद्या और भ्रम के आवरण से ही उसे उस शिशु के पूर्वजन्म की बातों का स्मरण नहीं होता और वह उन सारी कड़ुवाहट, द्वेष और घृणा के भावों से मुक्त रहता है। भ्रम और अविद्या के आवरण को फैला कर देवी असंख्य आत्माओं को आध्यात्मिक विकास के सर्पिल पथ पर अग्रसर करती रहती हैं।

✤ समझदारी और ज्ञान से बढ़ कर कोई वरदान नहीं है और अविद्या और नासमझी के बढ़कर कोई अभिषाप नहीं है। सांसारिक ज्ञान नहीं, बल्कि पराविद्या की प्राप्ति के लिए देवी की प्रार्थना कीजिए। अधिकाधिक समझदारी और आत्मप्रबुद्धता के लिए देवी की प्रार्थना कीजिए।

✤ कर्म, उपासना और ज्ञान में सफलता के लिए प्रार्थना कीजिए। कर्म का अभिप्राय मानवता की निष्काम सेवा से है। इससे चित्तशुद्धि होती है। परमात्मा के स्वरूप का ध्यान ही उपासना है। इससे मन का विक्षेप दूर होता है। आध्यात्मिक चिन्तन और मनन के द्वारा ज्ञान की सहायता से व्यक्ति आत्मोदघाटन करता है।

देवी की महिमा

दसवीं रात्रि

✤ असुरों पर देवी की विजय अँधकार पर प्रकाश, असत्य पर सत्य और मृत्यु पर अमरत्व की विजय का उत्सव है। इसे उपनिषद में **असतो मा सदगमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय,**

मृत्योर्मामृतम् गमय—"के रूप में प्रस्तुत किया गया है—'हमें असत्य से सत्य की ओर, अँधकार से प्रकाश की ओर और मृत्यु से अमरता की ओर ले चलो"।

✤ विध्वंस, विनाश, विपरीत स्थिति और असफलता में देवी को क्रियाशील देखिए। निराश नहीं होइए। सफलता और पूर्णता में देवी की कृपा का अनुभव कीजिए। सफलता में अहंकार को नहीं बढ़ने दीजिए। समझदारी, ज्ञान, सफलता और अन्तर्दृष्टि में देवी को उपस्थित देखिए। अभिमान और मिथ्या गर्व के प्रवाह में स्वयं को नहीं बहने दीजिए।

✤ **ऊँ दुं दुर्गायै नमः**—देवी दुर्गा की कृपा प्राप्ति का मंत्र है। **ऊँ श्री महा लक्ष्म्यै नमः**—देवी लक्ष्मी को प्रसन्न करने का मंत्र है। महासरस्वती के आवाहन का मंत्र—"**ऊँ यैं सरस्वत्यैनमः**" है। इन मंत्रों का प्रतिदिन श्रद्धा और भक्ति के साथ जप कीजिए और देवी माता को सदा अपने साथ उपस्थित अनुभव कीजिए।

✤ सभी प्रकार की अशुद्धियों का नाश करने वाली, सभी प्रकार के वरदान और आशीर्वादों प्रदान करने वाली तथा संसार के जंगल में भटकने वाली समस्त जीवात्माओं को अन्तिम लक्ष्य तक पहुँचाने वाली देवी माँ की प्रार्थना कीजिए। अपने जीवन को देवी की ओर सदा प्रवाहित होने वाली प्रार्थना की सरिता बना दीजिए। आत्मसाक्षात्कार के रूप में आप को परम विजय की प्राप्ति हो!

अर्चना

नीचे देवी के कुछ पवित्र नाम (जो देवी के विभिन्न गुणों को भी प्रदर्शित करते हैं) दिया जा रहा है। प्रत्येक मंत्र के उच्चारण के बाद भक्त एक पुष्प या अन्य कोई पवित्र वस्तु देवी को अर्पित करता है। इस धार्मिक अनुष्ठान को अर्चना कहते हैं:

ॐ

दुर्गानामावलि :

ॐ अदिशक्तये नमः ॐ महादेव्यै। अम्बिकायै। परमेश्वर्यै। ईश्वर्यै। अनैश्वर्यै। योगिन्यै। सर्वभूतेश्वर्यै। जयायै। विजयायै। जयन्त्यै। शांभव्यै। शांतायै। शांत्यै। ब्राह्मयै। बह्मांडधारिण्यै। महारूपायै। महामायायै। महाश्वेर्ये। लोकरक्षिण्यै। दुर्गायै। दुर्गपारायै। भक्तचिन्तामण्यै। मृत्यै। सिद्ध्यै। मूर्त्यै। सर्वसिद्धिप्रदायै। मन्त्रमूर्त्यै। महाकाल्यै। सर्वमूर्तिस्वरूपिण्यै। वैदमूर्त्यै। वेदभूत्यै। वेदान्तायै। व्यवहारिण्यै। अनघायै। भगवत्यै। रौद्रायै। रुद्रस्वरूपिण्यै। नारायण्यै। नारसिंह्यै। नागयज्ञोपवीतिन्यै। शंखडचक्रगदा–धारिण्यै। जटामुकुटशोभिन्यै। अप्रमाणायै। प्रमाणायै। आदिमध्यावसानायै। पुण्यदायै। पुण्योपचारिण्यै। पुण्यकीर्त्यै।। स्तुतायै। विशालाक्ष्यै। गम्भीरायै। रूपान्वितायै। कालरात्र्यै।.अनल्पसिद्धयै। कमलायै। पद्मवासिन्यै। महासरस्वत्यै। मनःसिद्ध्यै। मनोयोगिन्यै। मातंगिन्यै। चंडमुंडचारिण्यै।

दैत्यदानववासिन्यै। भेषज्योतिषायै। परंज्योतिषायै। आत्मज्योतिषायै। सर्वज्योतिःस्वरूपिण्यै। सहस्रमूर्त्यै। शर्वाण्यै। सूर्यमूर्तिस्वरूपिण्यै। आयुर्लक्ष्म्यै। विद्यालक्ष्म्यै। सर्वलक्ष्मीप्रदायै। विचक्षणायै। क्षीरार्णववसिन्यै। वागीश्वर्यै। वाक्‌सिद्ध्यै। अज्ञानज्ञानगोचरायै। बलायै। परमकल्याण्यै। भानुमंडल वासिन्यै। अव्यक्तायै। व्यक्तरूपायै। अव्यक्तरूपायै। अनंतायै। चन्द्रायै। चन्द्रमंडलवासिन्यै। चन्द्रमंडलमंडितायै। भैरव्यै। परमानंदायै। शिवायै। अपराजितायै। ज्ञानप्राप्त्यै। ज्ञानवत्यै। ज्ञानमूर्त्यै। कलावत्यै। श्मशानवासिन्यै। मात्रे। परमकल्पिन्यै। घोषवत्यै। दारिद्रहारिण्यै। शिवतेजोमुख्यै। विष्णुवल्लभायै। केशिविभूषितायै। कूर्मायै। महिषासुरघातिन्यै। सर्वरक्षायै। महाकाल्यै। ॐ महालक्ष्म्यै नमः।१०८।।

ॐ

लक्ष्मीनामावलिः

ॐ प्रकृत्यै नमः विकृत्यै। विद्यायै। सर्वभूतहितप्रदायै।
श्रद्धायै। विभूत्यै। सुरभ्यै। परमात्मिकायै। वाचे।
पद्मालयायै। पद्मायै। शुचये। स्वाहायै। स्वधायै।
सुधायै। धन्यायै। हिरण्मयै। लक्ष्म्यै। नित्यपुष्टायै।
विभावर्यै। अदित्यै। दित्यै। दीप्तायै। वसुधायै।
वसुधारिण्यै। कमलायै। कान्तायै। कान्तायै। कामाक्ष्यै।
क्रोधसंभवायै। अनुग्रहपरायै। बुध्ये। अनद्यायै।
हरिवल्लभायै। अशोकायै। अमृतायै। दीप्तायै।
लोकशोकविनाशिन्यै। धर्मनिलयायै। करुणालोकमात्रे।
पद्मप्रियायै। पद्महस्तायै। पद्माक्ष्यै। पद्मसुन्दर्यै
पद्मोभ्दवायै। पद्ममुख्यै। पद्मनाभप्रियायै। रमायै।
पद्ममालाधारायै। देव्यै। पद्मिन्यै। पद्मगन्धिन्यै।
पुण्यगन्धायै। सुप्रसन्ना। प्रसादाभिमुख्यै। प्रभायै।
चन्द्रवदनायै। चन्द्रायै। चन्द्रसहोदर्यै। चतुर्भुजायै।
चन्द्ररूपायै। इन्दिरायै। इन्दुशीतलायै। आह्लादजनन्यै।

पुष्टयै । शिवायै । शिवकर्यै । सत्यै । विमलायै ।
विश्वेजनन्यै । तुष्टायै ।
दारिद्रनाशिनयै । प्रीतिपुष्करिण्यै ।
शान्तायै । शुक्लामाल्यांबर धरायै । श्रियै । भास्कयै ।
विल्वनिलयायै । बारारोहायै । यशस्विन्यै । वसुन्धरायै
सिद्ध्यै । त्रैणसौम्यायै । शुभप्रदायै । नृपवेश्मगतानंदायै ।
वरलेक्ष्म्यै । वसुप्रदायै । शुभायै । हिरण्यप्राकारायै ।
समुद्रतनयायै । जयायै । मंगलायै । देव्यै ।
विष्णुवक्षस्थलस्थितायै । विष्णुपत्न्यै । प्रसन्नाक्ष्यै ।
नारायणसमाश्रितायै । दारिद्रध्वंसिन्यै । देव्यै ।
सर्वोपद्रववारिण्यै । नवद्धुर्गायै । महाकाल्यै ।
ब्रह्माविष्णुशिवात्मिकायै । त्रिकालज्ञानसंपन्नायै । ॐ
ॐ भुवनेश्वर्यैनमः ।।१०८ ।।

ॐ

सरस्वती नामवालिः

ॐ सरस्वत्यै नमः महाभद्रायै । महामायायै । वरप्रदायै ।
श्रीप्रदायै । पद्मनिलयायै । पद्माक्ष्यै । पद्मवक्त्रकायै ।
शिवानुजायै । पुस्तकभृते । ज्ञानमुद्रायै । रमायै । परायै
कामरूपायै । महाविद्यायै । महापातकनाशिन्यै ।
महाश्रयायै । मालिन्यै, महाभोगायै । महोत्साहायै ।
दिव्यंगायै । सुरवन्दितायै । महाकाल्यै । महापाशायै ।
महाकारायैं महांकुशायै । भीतायैं विमलायै । विश्वायै ।
विद्युन्मालायै । वैष्णव्यै । चन्द्रिकायै । चन्द्रवदनायै ।
चन्द्रलेखायै । विभूषितायै । सावित्र्यै । सुरसायै । देव्यै ।
दिव्यालंकारभूषितायै । वाग्देव्यैं । वसुधायै । तीव्रायै ।
महाभद्रायै । महाबलायै । भौक्तायै । भारत्यै । भामायै ।

गोविन्दायै । गोमत्यै । शिवायै । जटिलायै ।
विन्ध्यवासिन्यै । विन्ध्याचलविराजितायै । चंडिकायै ।
वैष्णव्यै । ब्राह्मयै । ब्रह्मज्ञानैकसाधनायै । सौदामिन्यै ।
सुधामूर्त्यै । सुभेदायै । सुरपूजितायैं सुवासिन्यै ।
सुनासायै । विनिद्रायै । पद्मलोचनायै । विद्यारूपायै ।
विशालाक्ष्यै । ब्रह्मजायायै । महाबलायैं त्रयीमूर्त्यै ।
त्रिकालाज्ञायै । त्रिगुणायै । शास्त्ररूपिण्यै ।
शुम्भासुरप्रमथिन्यै । शुभदायै । सुरात्मिकायै ।
रक्तबीजनिहंत्र्यै । चामुंडायै । अबिकायै ।
मुण्डकायप्रकारणायै । धूम्रलोचनामर्दिन्यै । सर्वदेवस्तुतायै
सौम्यायैं । सुरासुरनमस्कृतायै । कालरात्र्यै । कलाधरायै
रूपसौभाग्यदायिन्यैं वाग्देव्यै । वरारोहायै । वाराह्यै ।
वादिनासिन्यै । चित्रांबरायै । चित्रगंधायै ।
चित्रमाल्याविभूषितायै । कंतायै । कामप्रदायैं वनधायै ।
विद्याधरसुपूजितायै । श्वेताननायै । नीलभुजाये ।
चतुर्वर्गफलप्रदायै । चतुरानन्साम्राज्यै । रक्तमध्यायै ।
ब्रह्माविष्णुशिवात्मिकायै नमः १०८ ।।

ॐ

देवी सूक्तम्

नमो दैव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताःस्मताम्।।

देवी को नमस्कार है। महादेवी को नमन है। जो सदा कल्याण मयी है, जो सृष्टि के निर्माण में भौतिक कारण हैं, जो भद्रता और अच्छाई की जीवन्त प्रतिमूर्ति हैं, उस देवी को हम सदा नमन करते हैं।

रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमो नमः।
ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपिण्यै सुखायै सततं नमः।।

रूद्र रूपी (भयानक) उस देवी को सदा नमस्कार है, नित्य है तथा गौरी (शिव प्रिया) और ब्रह्माण्ड के पोषक (धात्रि) हैं। जो चन्द्रज्योत्सना के समान प्रकाशवान और स्वयं चन्द्र रूप हैं, उस देवी को सदा नमन है। उस देवी को सदा नमन है जो सदा आनन्दमयी और सुख की मूर्ति हैं।

या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।

सभी जीवों के माध्यम से क्रियाशील विष्णुमाया के नाम से विख्यात देवी को नमस्कार है। उनका बारम्बार नमन है।

या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।

सभी प्रणियों की चेतना के रूप में सुविख्यात देवी को नमन है। बार-बार उन्हें नमस्कार है।

या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेणसंस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।

सभी जीवों की बुद्धि रूप में स्थित देवी को नमस्कार है। उन्हें बारम्बार नमन है।

या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेणसंस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।

सभी जीवों में ऐश्वर्य और धन की देवी लक्ष्मी के रूप में स्थित उस महादेवी को नमन है। उन्हें बारम्बार नमस्कार है।

आरती

पूजा पद्धति में आरती का बहुत अधिक महत्त्व है। भगवान की मूर्ति अथवा चित्र के समक्ष घी अथवा कर्पूर की बत्ती जलाकर आरती की जाती है। आरती के साथ–साथ देवी–देवता की स्तुति अथवा मंत्रों का गान भी किया जाता है। स्तुतियों में परमात्मा के विभिन्न रूपों की अभिव्यक्ति और लीलाओं का बड़ा सुन्दर वर्णन होता है।

स्तुति समाप्त होने के पश्चात आरती की थाल सभी भक्तों के पास ले जायी जाती है। वो आदर पूर्वक पवित्र ज्योति की ओर अपनी दोनों हथेलियों को ले जाकर पुनः उसे अपने सिर और आँखों पर रखते हैं। आरती के अन्त में सार्वभौमिक शान्ति और सद्भावना के लिए शान्ति पाठ किया जाता है। फिर प्रसाद वितरण होता है।

ज्योति ब्रह्म का प्रतीक है। ब्रह्म ही सभी ज्योतियों की ज्योति है। ज्योति ईश्वर को अर्पित करना तथा इसके प्रति सम्मान प्रदर्शित करना वास्तव में अज्ञान के अन्धकार को विनष्ट करने वाली ज्ञान–ज्योति को प्रसन्न करने की एक प्रतीकात्मक क्रिया है।

आरती की ओर हथेलियों को ले जाकर पुनः उन्हे आँखों पर रखने की क्रिया प्रतीकात्मक है। ऐसा करते हुए भक्त का

भाव ज्योति रूपी ब्रह्म से प्रार्थना करने का होता है: "हे परमात्मन् रूपी ज्योति, आप मुझे आत्म दर्शन करने की दृष्टि प्रदान करें। मेरी बुद्धि अन्तःप्रज्ञा की ज्योति में रूपान्तरित हो जाय। जिस प्रकार से कर्पूर पिघल कर अग्नि में जल हो जाता है, वैसे ही मेरा अहं पिघल कर ब्रह्म में समाहित हो जाय।"

अगरबत्ती से निकलने वाली सुगन्ध अन्तःप्रज्ञा से प्रकाशित जीवन में प्रसारित दिव्य गुणों की सुगन्ध का प्रतीक है। चित्त जब विकार रहित हो जाता और जीवन दिव्य प्रेरणाओं से ओत–प्रोत हो जाता है, तो व्यक्ति के प्रत्येक कार्य में सुमधुर सुगन्ध परिव्याप्त हो जाती है। यह आध्यात्मिक दृष्टिकोण की सुगन्ध है। जिस प्रकार अगरबत्ती में छुपी सुगन्ध उसे जलाने के बाद निकलती है, वैसे ही सन्तोष, नम्रता, करुणा और क्षमा जैसे दिव्य गुण सबों में छुपे रहते हैं। परन्तु उसका प्राकट्य तभी होता है, जब अहंकार भक्ति की अग्नि में जलने लगता है।

प्रत्येक धार्मिक अनुष्ठान के अन्त में प्रसाद वितरित किया जाता है। प्रसाद दिव्य आध्यात्मिक स्पन्दनों से परिपूर्ण होता है। इसके माध्यम से ईश्वरीय कृपा प्राप्त होती है। भक्तों की श्रद्धा और मन्त्रों के स्पन्दनों के कारण प्रसाद में एक रहस्यमय शक्ति उत्पन्न हो जाती है। इससे मन और शरीर की व्याधियों को ठीक किया जा सकता है।

कुमकुम देवी का एक विशेष प्रसाद है। इसे दोनों भृकुटियों के मध्य (अज्ञाचक्र) पर लगाया जाता है। इस केन्द्र पर कुमकुम लगाने का अर्थ देवी का आशीर्वाद प्राप्त करना है।

विभूति भगवान शिव का प्रसाद है। इसे ललाट पर लगाया

जाता है। इसका अभिप्राय है ईश्वरीय कृपा से सभी कर्मों को भष्मीभूत कर देना।

विभूति धारण करने का निहितार्थ ईश्वर कृपा से सभीं कर्मो को जलाकर राख करने् की दिशा में निरन्तर अग्रसर होने की प्रेरणा बनाए रखना है।

आरती

जय जय आरती विघ्न विनायक
विघ्न विनायक श्री गणेश ।
जय जय आरती सुब्रमण्य
सुब्रमण्य कार्त्तिकेय ।
जय जय आरती वेणु गोपाला
वेणु गोपाला वेणु लोला ।
पाप विदुरा नवनीत चोरा
जय जय आरती वेंकट रमणा ।
वेंकट रमणा संकट हरणा
सीता राम राधे श्याम
जय जय आरती गौरी मनोहर ।
गौरी मनोहर भवानी शंकर
साम्ब सदाशिव उमा महेश्वर ।
जय जय आरती राज राजेश्वरी
राज राजेश्वरी त्रिपुरसुन्दरी ।
महा लक्ष्मी महा सरस्वती
महा काली महा शक्ति ।
जय जय आरती अंजनेया

अंजनेया हनुमन्ता ।
दत्तात्र्य त्रिमूर्ति अवतार
जय जय आरती शनैश्वराय ।
शनैश्वराय भास्कराय
जय जय आरती सद्गुरु नाथा ।
सद्गुरुनाथा शिवानन्दा
जय जय आरती विघ्न विनायक ।

श्री जगदीश जी की आरती

ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे ।
भक्त जनों के संकट, क्षण मे दूर करे ।।ॐ।।
जो ध्यावे फल पावे, दुःख बिनसे मन का ।
सुख-सम्पति घर आवे, कष्ट मिटे तन का ।।ॐ।।
मात-पिता तुम मेरे, शरण गहूँ किसकी ।
तुम बिन और न दूजा, आस करूँ जिसकी ।।ॐ।।
तुम पूर्ण परमात्मा, तुम अन्तर्यामी ।
पारब्रह्म परमेश्वर, तुम सबके स्वामी ।।ॐ।।
तुम करुणा के सागर, तुम पालनकर्ता ।
मैं मूर्ख खल कामी, कृपा करो भर्ता ।।ॐ।।
तुम हो एक अगोचर, सबके प्राणपति ।
किस विधि मिलूं दयामय, तुमको मैं कुमति ।।ॐ।।
दीनबन्धु दुःखहर्ता, तुम ठाकुर मेरे ।
अपने हाथ उठाओ, द्वार पड़ा तेरे ।।ॐ।।
विषय विकार मिटाओ, पाप हरो देवा ।
श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ, संतन की सेवा ।।ॐ।।

सर्व कल्याणार्थ प्रार्थना

असतो मा सद् गमय ।
तमसो मा ज्योतिर्गमय ।
मृत्योर्माऽमृतम् गमय ।

सर्वेषाम् स्वस्तिर्भवतु। सर्वेषाम् शान्तिर्भवतु ।
सर्वेषाम् पूर्णम् भवतु । सर्वेषाम् मंगलम् भवतु ।
सर्वे भवन्तु सुखिनः। सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु। मा कश्चित् दुःख भाग्भवेत् ।
ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः
पृथिवी शान्तिरापः शान्ति-रोषधयः शान्ति।
वनस्पतयः शान्तिः विश्वेदेवाः शान्ति ब्रंह्म शान्तिः
सर्व शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।
ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदम् पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमदाय पूर्णमेवावशिष्यते ।।

सबों का शुभ हो, सबों के लिए शान्ति हो
सबको पूर्णता मिले, सभी सुखी और समृद्ध हों !

सभी प्रसन्न हों, सभी नीरोग हों
सभी व्यक्ति अच्छाई देखें, किसी को कोई दुःख न हो।

हमें असत से सत्य की ओर ले चलो
हमें अँधकार से प्रकाश की ओर ले चलो
हमें मृत्यु से अमरता की ओर ले चलो ।

देवी का शक्ति रुप में ध्यान

शक्ति के विभिन्न रूपों पर ध्यान के कुछ अभ्यास यहाँ दिए जा रह   आप इस अभ्यास से ध्यान की स्थूल अवस्था से क्रमशः आगे बढ़ते हुए सूक्ष्म और उन्नत स्थिति को प्राप्त करते जायेंगे। ये क्रमिक यात्रा स्थूल शक्ति (जिसे **क्रियाशक्ति** कहते हैं) सूक्ष्म मानसिक शक्ति (जिसे **इच्छा शक्ति** कहते हैं) और इससे आगे अन्तःप्रज्ञा की सूक्ष्मतम शक्ति (जिसे **ज्ञान शक्ति** कहते हैं) तक जाने की क्रमिक अवस्थायें हैं। शक्ति की यह प्रत्येक अवस्था क्रमशः देवी दुर्गा, देवी लक्ष्मी और सरस्वती देवी के साथ संयुक्त है।

इस का आरंभ अपने मन को क्रियाशक्ति पर एकाग्रित करने के साथ करें। इस विशाल जगत को ऊर्जा का उफनते सागर के रूप में देखें। अनुभव करें कि आप इस महान सृष्टि के अभिन्न अंग हैं और यह ब्रह्माण्डी शक्ति आप के रग–रग में क्रियाशील है। अनुभव कीजिए

कि तूफान तड़ित झंझावात, भूकम्प तथा कोमल पत्तों और पुष्पों में जो शक्ति विद्यमान है, वही आप के हृदय में स्पन्दित हो रही है। यही शक्तिआप की नसनाड़ियों में संचारित हो रही है।

अपने मन को मणिपुर चक्र (नाभी) में केन्द्रित करते हुए अनुभव करें के उस केन्द्र पर कुण्डलिनी जागृत है। मानसिक रूप से देवी दुर्गा की मूर्ति का ध्यान कीजिए। इस भौतिक जगत में क्रियाशील—**क्रियाशक्ति** की अधिष्ठात्री देवी माता दुर्गा हैं। मन ही मन **ऊँ दुँ दुर्गायै नमः** मंत्र का जप करते हुए अनुभव करें कि आप सार्वभौमिक शक्ति के साथ पूर्णतः संयुक्त हैं। क्रियाशक्ति के साथ एकात्मता की चेतना के कारण अपने मन से सभी प्रकार की शारीरिक दुर्बलता को निकाल फेकिए।

अब अपने मन को अपने विचार और कामनाओं के मूल में विद्यमान सूक्ष्म और व्यापक—**इच्छाशक्ति** पर एकाग्रित करें। प्रकाश की गति से भी तीब्र मानसिक तल पर आप के विचार स्पन्दन के रूप में सभी दिशाओं में चलते रहते हैं। आप जो भी विचार प्रेषित करते हैं, वह एक स्पन्दन होता है। जो कभी समाप्त नहीं होता। यह इस सृष्टि के प्रत्येक कण में स्पन्दित होता रहता है।

इस अनन्त विचार शक्ति के विषय में विचार कीजिए। इन में सृष्टि और विनाश की असीम शक्ति छुपी हुई है। ये आप के जीवन को नियंत्रित करते हैं तथा आपके चरित्र को परिवर्तित कर सकते हैं।

महामानवों के विचारों से सैकड़ो वर्षों तक मानवता प्रभावित हो कर अपने भाग्य का निर्माण करती रहती है। आपके मानसिक लोक में प्रवाहित वह ऊर्जा आप के स्वरूप का स्थाई और अभिन्न अंग है।

अपने मन को अब हृदय केन्द्र पर एकाग्रित करते हुए अनुभव करें कि इस केन्द्र पर कुण्डलिनी पूरी तरह जागृत है। मानसिक रूप से इच्छा शक्ति के प्रतीक देवी लक्ष्मी को देखिए। श्री महा लक्ष्म्यै नमः मंत्र का जप करते हुए इस सार्वभौमिक मानसिक शक्ति के साथ अपनी अभिन्नता का अनुभव करें।

अन्तरिक रूप से निश्चय करें "मेरा मन प्रखर और गतिशील ऊर्जा से परिपूर्ण है। मेरा संकल्प दृढ़ है। मेरे मन में कल्पनातीत शक्ति छुपी हुई है।" जैसे ही यह चेतना विकसित हो जाती है और आप के मन को इस ब्रह्माण्डीय मानसिक ऊर्जा की झलक मिल जाती है, तो इसमें चिन्ता, उत्तेजना, दुःख और किसी भी प्रकार की ऋणात्मक वृत्तियों के लिए कोई स्थान नहीं रह जाता।

अब ऊर्जा के सूक्ष्मतम रूप—**ज्ञानशक्ति** अथवा अन्तःप्राज्ञिक शक्ति पर ध्यान कीजिए। अपनी दिव्य बुद्धिमत्ता के विषय में विचार कीजिए। प्रत्येक जीव का सारतत्त्व ज्ञान रूप परम आत्मन् है। "तत्वमऽसि"—मैं वही हूँ" इस सत्य की

अनुभूति ही सभी प्रकार के ज्ञानों की परम परिणति है। ज्ञान शक्ति से बढ़कर इस जगत में दूसरा कुछ भी शक्तिशाली नहीं है। यह एक ही झटके में संसार के समस्त भ्रमों को समाप्त कर देता है।

अपना ध्यान आज्ञा चक्र पर केन्द्रित करें। अनुभव करें कि इस केन्द्र से कुण्डलिनी समस्त शरीर में फैल रही है। ज्ञान शक्ति की अधिष्ठात्रि देवी सरस्वती का मानसिक ध्यान करें। ॐ यैं सरस्वत्यै नमः का मानसिक जप करते हुए अनुभव करें कि ज्ञान की देवी आप को अन्तः प्रज्ञा की प्रखर ज्योति से परिपूर्ण कर रही हैं। अनुभव करें कि जैसे प्रकाश अँधकार को दूर करता है, वैसे ही अन्तःप्राज्ञिक ज्योति से अज्ञान का अँधकार हमेशा –हमेशा के लिए समाप्त हो रहा है।

भगवान विष्णु

माया—एक गूढ़ पहेली

(देवी भागवत से संकलित एक उपाख्यान)

एक बार ऋषि नारद बैकुंठ लोक गए। जब वे विष्णु भगवान के समीप पहुँचे तो भगवान ने बड़े प्रेम और सद्भाव से उनका स्वागत किया। परन्तु नारदजी को यह देख कर घोर आश्चर्य हुआ कि देवी लक्ष्मी ने उन्हें देख कर अपना मुँह छिपा लिया और उनसे दूर हट गयी। इस घटना से आहत हुए नारद ने भगवान से पूछा:—"हमारे जैसे तपस्वी और शुद्ध चित्त ऋषि को देख कर देवी लक्ष्मी क्यों दूर चली गयी?" भगवान विष्णु ने कहा:—"हे नारद, व्यक्ति के मन में चल रही मोह और भ्रम की सूक्ष्म तरंग को समझना सहज नहीं। माया को समझना बड़ा कठिन है।"

नारद ने तब विष्णु भगवान से आग्रह किया "भगवन, कृपा करके आप मुझे अपनी माया का दर्शन करायें।" "ठीक है" भगवान ने कहा।" मैं बाद में आपको इस के रहस्य को बताऊँगा। अभी हम लोग स्वर्ग की सैर करने चलें"।

भगवान ने अपने वाहन गरुड़ जी का आह्वान किया जो

तत्काल उपस्थित हो गए। दोनों उस पर सवार हो कर अन्ताकाश में उड़ने लगे। थोड़ी देर में वे एक अत्यन्त रमणीक स्थान पर पहुँच गए जहाँ स्वच्छ जल की सरिता बह रही थी तथा वृक्षों पर सुन्दर पुष्प और फल लगे हुए थे।

भगवान ने कहाः—"इस अद्‌भुत नदी में हम लोग स्नान करें, फिर यही कुछ समय के लिए विश्राम करेंगे। "भगवान ने नारद से आग्रह कियाः—"पहले आप स्नान करें।" "प्रभु की जैसी इच्छा" नारद ने कहा और अपनी वीणा भगवान को रखने के लिए दे कर नदी में प्रवेश किया।

ज्योंही उन्होंने पहली डुबकी लगई माया शक्ति से उनका सम्पूर्ण शरीर और व्यक्तित्व ही बदल गया। जब वे जल से बाहर निकले तो न वहाँ भगवान विष्णु थे और ना ही नारद। वहाँ केवल एक सुन्दर स्त्री थी। उसने सुन्दर वस्त्र और आभूषण धारण कर रखा था। परन्तु न तो उसे यह ज्ञात था कि वह कौन है। और नाही वह यह जानती थी कि वह कहाँ से आई है।

दिक्कभ्रमित और विस्मित होकर जैसे ही वह युवती खड़ी हुई, कि अपने सैनिकों के साथ राजा तालध्वज उधर से निकले। वे जंगल में आखेट के लिए आए हुए थे। उस सुन्दर नवयौवना को देखते ही वे मोहित हो गए। "तुम कौन हो देवी?" राजा ने पूछा। युवती ने कहाः "हे राजन्, मुझे यह नही ज्ञात है कि मैं कौन हूँ।" राजा ने उसके समक्ष अपनी रानी बनने का प्रस्ताव रखा, जिसे उसने सहर्ष स्वीकार कर लिया। क्योंकि उसका कोई भी संरक्षक नहीं था।

इस प्रकार वह महान राजा की पटरानी बन गयी। राजा भी उसे अन्य रानियों से अधिक चाहने लगा। –धीरे बहुत समय व्यतीत हो गया। उसका नाम रानी सौभाग्य सुन्दरी रखा गया था। वह इस सत्य से सर्वथा अनभिज्ञ थी कि वह वास्तव में नारद है। कालान्तर में रानी ने बारह पुत्रों को जन्म दिया। जैसे–जैसे वे सभी बड़े होते गए, वैसे–वैसे रानी सौभाग्य सुन्दरी (जो वस्तुतः नारद थे) अनेक प्रकार की समस्याओं से घिरने लगी। कभी इतने बडे परिवार के आपसी कलह को सुलझाने में व्यस्त होती, कभी अपने पुत्रों के पुत्र–पुत्रियों के जन्मोत्सव मनाती। कभी बीमार पड़ने पर उन सबों की देखरेख में उलझी होती, तो कभी उनकी किसी सफलता अथवा उपलब्धि में आनन्द मनाती।

एक बार एक शक्तिशाली शत्रु राजा ने उसके राज्य पर आक्रमण कर दिया। उसका सामना करने के लिए राजा अपने सभी पुत्रों के साथ युद्ध भूमि में चला गया। घमाशान युद्ध हुआ और सौभाग्य सुन्दरी के सभी बारह पुत्र उस युद्ध में शहीद हो गए। पराजित राजा बुरी तरह घायल होकर किसी प्रकार जान बचा कर भाग निकला।

रानी को जब अपने पुत्रों की मृत्यु और राजा की पराजय की सूचना मिली, तो वह दुःख के सागर में डूब गयी। वह अपने प्रिय पुत्रों के मृत शरीर को देखने के लिए युद्ध भूमि में चली गयी। वहाँ अपने समस्त परिवार को मरा देख कर उसका दुःख और तीव्र हो गया। वह जोर–जोर से विलाप करने लगी।

उस समय भगवान विष्णु ने एक साधु के रूप में उस के

समक्ष उपस्थित होकर कहाः "हे देवी, तुम क्यों विलाप कर रही हो? यह विधि का विधान है। जो भी जन्म लेता है उस की मृत्यु निश्चित है। शोक कर के तुम दिवंगतात्मा की सहायता नहीं कर रही हो। तुम्हें इन की आत्मा की शान्ति के लिए इस नदी में स्नान कर प्रार्थना करनी चाहिए।"

रानी ने नदी में डुबकी लगायी। ज्योहि वह पानी से बाहर आयी उसमें रूपान्तरण हो गया। वह पुनः नारद बन गयी। भगवान विष्णु उनकी वीणा लिए बहाँ मुस्कुरा रहे थे। भगवान ने कहाः "हे महर्षि, आप स्नान करने में बहुत देर कर रहे हैं।" तब नारद को अनुभव हुआ कि उनके द्वारा अनुभूत सभी घटनायें माया का गूढ़ खेल था।

प्रतीक अर्थ

वस्तुतः हम सभी ऋषि नारद की तरह दिव्य और पवित्र हैं। परन्तु जब हम लोग परिसीमित मन—अविद्या की आकर्षक नदी में प्रवेश करते हैं, तो हम लोग जीव (परिसीमित व्यक्तित्व) रूप में बदल जाते हैं।

जीवात्मा के रूप में आप अपने अहंकार के साथ तादात्म्य सूत्र में बन्ध कर दिक्काल से परिमित इस जीवन और जगत की समस्याओं के समाधान में उलझ जाते हैं। परन्तु इस सापेक्ष जगत में किसी भी समस्या का स्थाई निदान है ही नहीं।

अपने परिवार और भौतिक उपलब्धियों में गहनता से आसक्त होने के कारण आप को हमेशा यही लगता है कि

ये चीजें ही वास्तव में महत्वपूर्ण और मूल्यवान हैं। इसके परिणाम स्वरूप इस तथ्य को विस्मृत कर कि स्वरूपतः आप अमर आत्मन् हैं, आप इन नश्वर चीजों के लिए ही जीने लगते हैं।

सत्संग, सद्ग्रन्थों के स्वाध्याय, ध्यान और ईश्वर कृपा से जब आप में वैराग्य का उदय होता है, तब आप को इस सत्य की अनुभूति होती है। और आप यह अनुभव करते हैं कि एक न एक दिन यह सब कुछ समाप्त हो जाएगा। आप जिस पर निर्भर हैं वह हमेशा आप का आधार नहीं बना रहेगा। आप को तब माया की गहन और रहस्यमय लीला का ज्ञान हो जाता है और आप फिर गुह्य जागरण (आत्म जागृति) के लिए प्रयास करने लगते हैं।

इस प्रकार आप एक अन्य प्रकार की सरिता:ज्ञान-गंगा की ओर उन्मुख हो जाते हैं। ज्योंही आप भगवान विष्णु की माया की मूर्च्छा से जग कर अपने सच्चे स्वरूप में प्रकट हो जाते हैं, उस समय आप अपने समक्ष परमात्मा को मुस्कुराते हुए पाते हैं। आप जीव भाव के भ्रम से मुक्त हो कर ब्रह्म भाव में स्थित हो जाते हैं। आपके अनन्त जन्मों के विविध प्रकार के अनुभव तथा समस्त प्रकार के दुःख तथा संताप आप की दृष्टि से वैसे ही समाप्त हो जाते हैं, जैसे जगने के पश्चात् दीर्घ स्वप्न की स्मृति विलीन हो जाती है और आप ''अहम् ब्रह्मास्मि''—मैं ही ब्रह्म हूँ—की अनुभूति कर लेते हैं।

विजय दशमी का महान संदेश यह है कि आपके समक्ष या तो अज्ञान की गन्दी नदी में डूबते उतराते रह कर एक भ्रम से दूसरे भ्रम में उलझे रहने अथवा ज्ञान गंगा में डुबकी लगाकर अपने आत्मस्वरूप की अनुभूति करने की छूट है। इन दोनों में से किसी एक को चुनने के लिए आप स्वतंत्र हैं। जो सही चुनाव करता है, वह विजयी बन कर अपने जीवन लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है।

देवी माता आप सबों को समझ, अन्तःप्रज्ञा और आत्म प्रबुद्धता प्रदान करें।

अहंकार का उत्थान और पतन

देवी भागवत् में अहंकार के विध्वंसात्मक स्वरूप से सम्बन्धित एक कथा है। यह राजा नहुष के अहंकार के उत्थान और पतन की कहानी है।

प्राचीन काल में नहुष नामक एक महान तथा शक्तिशाली राजा थे। अपने शासन काल में उन्होने अनेक यज्ञ तथा पुण्य किया था। अपने शुभ कर्मो के फलस्वरूप वे स्वर्ग के स्वामी होने के अधिकारी बन गये।

एक बार देवताओं के राजा इन्द्र को कहीं एकान्त वास के लिये जाना पड़ा। प्रश्न खड़ा हुआ कि इन्द्र की अनुपस्थिति में स्वर्ग का शासन कौन चलाये? देवताओं और ऋषियों की सभा बुलाई गयी। सबों ने मृत्युलोक के राजा नहुष का प्रस्ताव रखा। अपने आध्यात्मिक गुणों के कारण उन्हें स्वर्ग का शासक बनने के लिए चुन लिया गया।

तुरन्त एक दूत के द्वारा राजा नहुष को सूचना भिजवाई गयी कि उन्हें स्वर्ग लोक में पदोन्नति दी गयी है, जहाँ वे देवताओं के शासक इन्द्र बनेंगे। राजा नहुष इस समाचार से अत्यन्त प्रसन्न हुये और स्वर्ग के लिए प्रस्थान किया। वहाँ जाकर वे राजकाज चलाने लगे।

ऐसी स्थिति में विनम्रता के स्थान पर उन्हें अहंकारी बना दिया। इसके पहले वे पुण्यात्मा थे। किन्तु उनका पुण्यकर्म अहंकार पर आधारित था। अतः वे स्वर्ग का स्थान पाकर अत्यन्त घमंडी बन गये। देवता और ऋषिगण उन में आये इस परिवर्तन से प्रसन्न नहीं थे। किन्तु चूँकि उन लोगों ने स्वंय ही उन्हें इन्द्र बनाया था, अतः वे कुछ कहने की भी स्थिति में नहीं थे।

धीरे–धीरे नहुष का अहंकार बढ़ता चला गया और वे इन्द्र की पत्नी शचि पर लोलुप दृष्टि रखने लगे। वे शचि के ही विचारों में मग्न रहने लगे। उन्होंने सोचा "क्यों न शचि मेरी पत्नी बन जाये? इससे मेरा गौरव और बढ़ जायेगा।"

उन्होने शचि के पास संदेश भेजा कि वह उन्हें पति रूप में स्वीकार कर ले। शचि को नहुष के सामने उपस्थित किया गया। नहुष ने अपना प्रस्ताव रखा, कि यदि वह उन्हें पति रूप में स्वीकार कर लेगी तो दोनो मिलकर स्वर्ग का वैभव भोग सकेंगे। चूँकि इन्द्र मर चुके हैं और यदि जिन्दा भी हैं तो मृतवत् ही हैं, क्योंकि अब उनके पास स्वर्ग का साम्राज्य नहीं है। शचि ने नहुष को समझाने का प्रयत्न

किया। किन्तु वे अपनी बात पर अडे रहे। जितना वह समझाती उतना ही नहुष का क्रोध बढ़ता जाता। नहुष के क्रोध से देवता और ऋषिगण भी भयभीत हो गये। वे सोचने लगे नहुष के इस भयंकर अहंकार का क्या किया जाय और किस प्रकार उसके अधिकार को वापस लिया जाय।

जब शचि ने देखा कि नहुष मानने को तैयार नहीं हैं, तब उस ने सोचने के लिये नहुष से कुछ समय माँगा। नहुष इससे सहमत हो गये। इस बीच शचि देवताओं के गुरु वृहस्पति के पास सलाह माँगने गयी। वृहस्पति ने सलाह दिया कि इस स्थिति में देवी सरस्वती ही उनकी सहायता कर सकती हैं। इसके साथ वृहस्पति ने शचि को देवी सरस्वती की आराधना करने की दीक्षा दिया। शचि ने सरस्वती देवी का अह्वान किया। देवी सरस्वती ने शचि को अन्तर्दृष्टि प्रदान किया। देवी सरस्वती की कृपा से शचि ने उस विषम परिस्थिति से उबरने का उपाय जान लिया।

शचि ने नहुष को संदेश भिजवाया कि वह उन्हे पति रूप में स्वीकार कर सकती है, किन्तु उन्हें ऐसी पालकी में सवार होकर उसके पास आना होगा, जिसे सिर्फ ऋषिगण ही ढ़ोयेंगे। आगे शचि ने कहा: "प्रत्येक देवता का अपना एक वाहन होता है। भगवान् विष्णु गरुण पर चलते हैं। भगवान शिव नन्दी की संवारी करते हैं। चूँकि राजा नहुष मृत्युलोक से आकर इतना शक्तिशाली बन गये हैं, अतः

उनका वाहन भी अद्भुत होना चाहिये। इस प्रकार उन्हें ऋषिगण द्वारा ढ़ोयी जाने वाली पालकी पर चढ़कर आना चाहिये। ऐसा वाहन किसी अन्य का नहीं हो सकता।''

अहंकार के वशीभूत, अर्थात मदान्ध राजा नहुष ये समझ नहीं पाये कि वे किसी झंझट में फँसने वाले हैं। बल्कि उन्होने अनुभव किया कि उन्हे सम्मानित किया जा रहा है। इससे सभी देव और ऋषिगण उनकी प्रशंसा करेंगे। अतः नहुस ने संदेश भेजा कि वे ऋषियों द्वारा ढ़ोयी गयी पालकी पर ही आएंगे। शचि ने कहा: ''ठीक है मैं आपकी प्रतीक्षा करुँगी।''

तुरन्त राजा ने ऋषियों को पालकी ढ़ोने के लिये तैयार किया। ऋषियों ने प्रसन्नता प्रकट की। क्योंकि वे जानते थे कि नहुस राजा का क्या होना है। निर्धारित समय पर ऋषिगण जिनमें ऋषि अगस्त भी थे, एकत्रित हुये। उन्होंने नहुस की पालकी को उठाया और शचि के निवास की ओर प्रस्थान करने लगे। नहुस पालकी पर अभिमान से बैठे हुये बहुत व्यग्रता से उस क्षण का इन्तजार करने लगे जब वे शचि को पत्नी रूप में पा लेंगे।

राजा नहुष ऋषियो पर झुँझलाये जा रहे थे। क्योंकि एक तो उनकी चाल में एकरूपता नही थी, तथा दूसरे वे बहुत धीमी गति से चल रहे थे। नहुष सोचने लगे भगवान विष्णु का वाहन बहुत तीव्र गति से चलता है। अन्य देवताओं का वाहन भी तेजी से चलता है। मैने ऐसा वाहन स्वीकार करके भूल की है। राजा अपना धैर्य खोकर

ऋषियों को डाँटने फ़टकारने लगे। फिर वे ऋषि़यों पर चिल्लाने लगेः "सर्प, सर्प" अर्थात जल्दी–जल्दी चलो। संस्कृत मैं सर्प का एक अर्थ होता है "साँप" तथा दूसरा "शीघ्र"।

नहुष के चिल्लाने पर ऋषियों ने अपनी गति अपनी सामर्थ्य के अनुसार बढ़ायी। किन्तु उनका प्रयास और तेजी नहुस को नहीं भायी। राजा फिर चिल्लाने लगे "सर्प–सर्प" और आग बबुला होकर उन्होने ऋषि अगस्त की पीठ पर एक लात मारी। अगस्त ने तुरन्त उन्हे श्राप दिया "तू सर्प बन जाओ।" उसी क्षण राजा सर्प बन कर स्वर्ग से मृत्युलोक में आ गिरे। राजा कई शताब्दी तक पृथ्वी पर सर्प बने रहे। अन्त में महाभारत के समय राजा युद्धिष्ठिर से उनकी मुलाकाल हुयी।

यद्यपि वे सर्प थे, किन्तु मनुष्यों की तरह बोल सकते थे। राजा युधिष्ठिर बहुत धर्मात्मा थे। अतः उनके सम्पर्क से नहुष रूपी सर्प को मुक्ति मिली। किन्तु मुक्ति के पहले उन्हे बहुत कष्ट भोगना पडा था। यह कथा नहुष के रूप में अहंकार के उत्थान और पतन को प्रतीक रूप में दर्शाती है।

प्रतीक अर्थ

जब व्यक्ति सकाम्य अर्थात स्वर्गिक आनन्द की कामना से कर्म करता है, तो उस कर्म के फलस्वरूप उसे स्वर्गिक सुख मिल जाता है। किन्तु यह सुख परमानन्द अर्थात मुक्ति के समान नहीं होता। राजा

नहुष बहुत बडे सम्राट थे। उन्होंने अनेक पुण्य कर्म किया था। किन्तु दार्शनिक अन्तर्दृष्टि के अभाव में किया गया शुभ कर्म उनके अहंकार का निवारण नहीं कर सका। अन्त में अहंकार उनके पतन का कारण बना।

अतः यदि आप दार्शनिक अन्तर्दृष्टि विकसित कर लेते हैं तब आपको स्वर्गिक सुख की चाह नहीं रह जाती। आप अहंकार से मुक्त होना चाहते हैं। आप चित्त शुद्धि के लिये कर्म करते हैं। सूक्ष्म लोक के सुख पाने के लिये आप कर्म नहीं करते।

इस कथा में दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है, कि जब तक आपका अवचेतन परिष्कृत नहीं हो जाता, आपकी उपलब्धियाँ, मान-मर्यादा और वैभव इत्यादि आपकी बुद्धि को विकृत कर देती हैं। यदि अपरिष्कृत बुद्धि वाला व्यक्ति महान और शक्तिशाली बन जाता है, तो उसका घमंड अत्यधिक बढ़ जाता है। वह उस शक्ति को सम्भाल नहीं पाता और राजा नहुष की भाँति उसका पतन हो जाता है।

शचि विवेक का प्रतीक है जिसे अहंकार द्वारा गुमराह नहीं किया जा सकता है। अहंकारिक वृत्ति द्वारा विवेक पर नियंत्रण करने का प्रयास व्यक्ति को पतन के गर्त में गिरा देता है।

ऋषि को पालकी में लगाने का गहन प्रतीकात्मक महत्व है। यदि आप अपने व्यक्तित्व को सुनियोजित ढंग से विकसित नहीं कर लेते, तो आपका व्यक्तित्व रूपी

रथ सुचारू ढ़ंग से चल नहीं पाता। इस का संचालन उच्च आदर्श, गहन अन्तर्दृष्टि, विवेक तथा चिन्तन से होना चाहिये। न कि अहंकार से। किन्तु आपकी निम्न वृत्तियाँ आपकी उच्च वृत्तियों पर हावी होती रहती हैं।

अहंकार की अन्तिम परिणति उसका उन्मूलन ही है। जब अहंकार समाप्त हो जाता है, तभी उत्कृष्टता तथा भव्यता का प्रादुर्भाव होता है। किन्तु जब अहंकार प्रबल होता है, तब पतन सुनिश्चित हो जाता है। यद्यपि इस तथ्य में विरोधाभास प्रतीत होता है। किन्तु सत्य यही है। जब आपका अहंकार समाप्त हो जाता है, तभी आप अपने अस्तित्व का आनन्द ले पाते हैं।

अतः जब नहुष ने ऋषियों पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने का प्रयत्न किया तब उसका पतन हो गया। शचि को प्राप्त करने के बदले उसे भवसागर का बँधन मिला।

यह कथा दर्शाती है कि देवी सरस्वती की बन्दना से अहंकार पर विवेक का प्रभुत्व स्थापित हो जाता है। देवी की कृपा से आप चिन्तनशील बन जाते हैं। जिसके फल स्वरूप आपको गहरी अन्तर्दृष्टि तथा विवेक प्राप्त होता है। इसके विपरीत, यदि आप अहंकार को प्रोत्साहन देते हैं, यानि अपने जीवन में आप शक्ति, यश, वैभव, धन, सम्पदा इत्यादि अहंकारिक मूल्यों को महत्व देते हैं, तब देवी आपकी बुद्धि को भ्रमित कर देती है। यही प्रक्रिया राजा नहुष के पतन का कारण बना। आपमें

अन्तर्निहित देवी सरस्वती आप को प्रबुद्ध बनाती हैं, या भ्रमित कर देती है।

जब आप अहंकारिक भावनायें जैसे स्वार्थपरता, लोभ तथा पाखंड को प्रश्रय देते हैं, तो आपके भीतर की देवी सरस्वती आपकी बुद्धि को विकृत बना देती हैं। आप सोचते हैं कि आप अपनी भलाई कर रहे हैं, किन्तु आप भविष्य के लिये कष्टो को आमंत्रित करते हैं। इसके विपरीत, यदि आप सद्‌मार्ग पर चलकर सद्‌गुणों को विकसित करते हैं, तो देवी सरस्वती मुस्कुराती हुई आपकी बुद्धि को प्रखर बनाती हैं। आप जीवन के सूक्ष्म रहस्यों को जान लेते हैं। आपके सारे कष्ट और अन्तर्द्वंद्व समाप्त हो जाते हैं। इस प्रकार, बुद्धि अन्तःप्रज्ञा में बदल जाती है। तब जीवात्मा स्वर्ग लोक यानि अलौकिक आनन्द प्राप्त करता है। दूसरी ओर अहंकार के प्रबल होने से जीवात्मा संसार-चक्र में फँस जाता है।

आपको सरस्वती देवी की अनन्त कृपा और
आशीर्वाद प्राप्त हो।

स्वामी ज्योतिर्मयानन्द आश्रम
एक परिचय
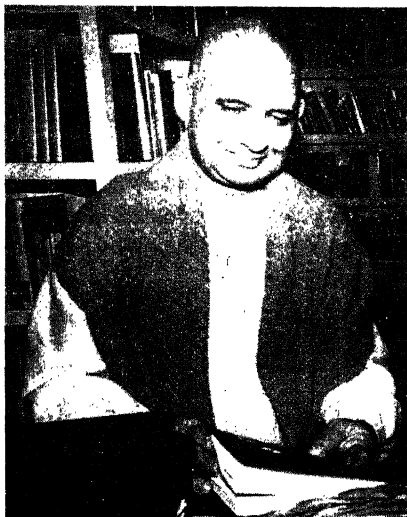
इन्टरनेशनल योग सोसायटी

लाल बाग, लोनी-201 102 गाजियाबाद, (उ० प्र०)
टेली फोन, (0120)4600237
दिल्ली लोकल-91-4600237
e-mail: iys@vsnl.com

शहादरा दिल्ली से ७कि. मी. तथा ऐतिहासिक लालकिला से लगभग १५ कि. मी. उत्तर–पूर्व, दिल्ली–उ० प्र० सीमा पर ५००० वर्गगज में फैला यह आश्रम अत्यन्त शान्त और सुन्दर परिवेश में निर्मित है। इसके चतुर्दिक हरियाली एवं पुष्पों से भरे उपवन हैं, जो प्राचीन ऋषि–महर्षियों के दिव्य आश्रम की याद दिलाते हैं। आश्रम के भव्य–भवन में आधुनिक सुविधाओं से युक्त निवास स्थल के अतिरिक्त विशाल सत्संग भवन, सद्ग्रन्थों से भरा पुस्तकालय, अनुभवी एम. बी. बी. एस, एम. डी. डिग्री प्राप्त चिकित्सक युक्त अस्पताल और निजी प्रिंटिंग प्रेस है। यहाँ नियमित सत्संग, स्वाध्याय, साधना और सेवा–कार्य चलते रहते हैं। इन सबों से बढ़कर आश्रम परिसर मानवता के भाग्य को परिवर्तित करने की शक्ति से पूर्ण, पूज्य गुरुदेव योगमार्तण्ड श्रीस्वामी ज्योतिर्मयानन्दजी के दिव्य और गत्यात्मक आध्यात्मिक स्पन्दनों से परिव्याप्त है।

आरंभिक आधार–३ फरवरी १६७४ समस्त आध्यात्मिक जगत के लिए एक अत्यन्त शुभ दिन था। पूज्य गुरुदेव श्रीस्वामी ज्योतिर्मयानन्दजी के जन्म–दिवस पर आयोजित सत्संग सभा में स्वामीजी के कार्यों को भारत में प्रसारित करने के उद्देश्य से युवक संयोजक शशिभूषण मिश्र ने "**स्वामी ज्योतिर्मयानन्द योग संस्थान**" नामक संस्था की स्थापना की। भारत में इन्टरनेशनल योग सोयासटी का यही आरंभिक आधार बना।

इन्टरनेशनल योग सोसायटी

स्वामी जी ने १६६६ में ही इस सोसायटी की स्थापना अमेरिका में की थी। परन्तु जब "स्वामी ज्योतिर्मयानन्द योग

संस्थान'' के माध्यम से स्वामीजी की आध्यात्मिक क्रियायें भारत में बढ़ने लगी तो शिष्यों के आग्रह पर मार्च १६७८ में ''इन्टरनेशनल योग सोसायटी'' की स्थापना स्वामीजी ने किया। १६७८ से १६८४ अगस्त तक इसकी समस्त क्रियायें पटना (बिहार) से होती रही। १६८४ में आश्रम के लिए भूमि मिलने पर इसे दिल्ली सीमा पर स्थित लालबाग कॉलनी, गाजियाबाद उ० प्र० में स्थानान्तरित कर दिया गया।

संचालक

आश्रम की समस्त गतिविधियाँ पूज्य गुरुदेव श्रीस्वामी ज्योतिर्मयानन्द जी महाराज के निर्देशानुसार उनके अनन्य भक्त एवं समर्पित शिष्य **योगिरत्न डॉ० शशिभूषण मिश्र** एम. बी. बी. एस. डी. अर्थो, एस. आर. एफ. तथा **डॉ० प्रतिभा मिश्र** एम. बी. बी. एस, डी. जी. ओ, एम. डी की देखरेख में चलती हैं।

सोसायटी के मुख्य उद्देश्य

१. जातिलिंग और सम्प्रदाय से ऊपर उठ कर सबों को एक ही दिव्य जीवन की अनुभूति कराते हुए सभी धर्मों के सन्तमहात्मा, अवतार, गुरु तथा आध्यात्मिक उपदेशों में वर्तमान मूलभूत एकता को उद्घाटित कर, संसार के समस्त धर्मों में सामञ्जस्य विकसित करना।

२. आध्यात्मिक जीवन के मूल्यों तथा दर्शन का प्रसार करना।

३. योग-वेदान्त और भारतीय दर्शन की शिक्षा देने के लिए

नियमित एवं सुनियोजित कक्षायें चलाना।

४. जीवन के शाश्वत आध्यात्मिक मूल्यों के आधार पर मानवता के सांस्कृतिक उत्थान में योगदान करना।

५. सभी लोगों में आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने की प्रेरणाग्नि प्रज्वलित करने के लिए गोष्ठी, परिचर्चा, सभा तथा सत्संग आयोजित करना।

६. आध्यात्मिक साहित्यों का प्रकाशन तथा शैक्षणिक संस्थाओं का निर्माण करना।

७. रोगी तथा पीड़ित मानवता के लिए अस्पताल, लावारिस बच्चों, विधवाओं तथा वृद्धों की देखभाल के लिए विशेष प्रकार के अनाथालयों की व्यवस्था करना। आध्यात्मिक साधको का मार्गदर्शन करना।

गतिविधियाँ

योग-साधना शिविर :—साधकों के लिए योग—साधना शिविर आयोजित किया जाता है। विद्यार्थियों और बच्चों के लिए अलग शिविर लगाये जाते हैं।

पुस्तकों का हिन्दी अनुवाद एवं प्रकाशन:—पूज्य गुरुदेव की इस समय तीस अंग्रेजी पुस्तकें हिन्दी में अनूदित हो चुकी हैं।

रोगियों की सेवा :—आश्रम के—"स्वामी ज्योतिर्मयानन्द चैरिटेबल हॉस्पिटल" में सभी प्रकार के रोगों की चिकित्सा के साथ बच्चों को निःशुल्क रोग प्रतिरोधक टीके लगाने की भी व्यवस्था है।

'योगाञ्जलि' मासिक पत्रिका का प्रकाशन :—'योगाञ्जलि' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन विगत कई वर्षों से हो रहा

है। इसमें योग, वेदान्त–दर्शन, सदाचार तथा जीवन की समस्याओं को गहन अन्तर्दृष्टि तथा दार्शनिक आधार पर सुलझाने के लिये प्रेरक निर्देश प्रकाशित किए जाते हैं।

दिव्य ज्योति पब्लिक स्कूलः—आरंभ से ही बच्चों में आध्यात्मिक संस्कार स्थापित करने के साथ–साथ इस विद्यालय में आसन, प्राणायाम, ध्यान और प्रार्थना सिखाई जाती है।

वृद्धों की सेवाः—आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर, अवकाश प्राप्त अथवा जो वानप्रस्थ जीवन व्यतीत करना चाहते हैं, उनके रहने और साधनामय जीवन व्यतीत करने की आदर्श सुविधा आश्रम में उपलब्ध है।

साप्ताहिक सत्संग :—प्रत्येक रविवार को १० बजे से १२ बजे दिन तक आश्रम में सत्संग आयोजित होता है।

ज्योतिर्मय ग्राम विकास केन्द्रः—पूज्य गुरुदेव के जन्मस्थान पर स्थित यह केन्द्र स्थानीय जनता की विविध प्रकार से सेवा कर रहा है। यहाँ बालिकाओं के लिए "ललितानन्द गर्ल्स स्कूल", एक चैरिटेबल अस्पताल, महिलाओं और युवकों के लिए रोजगारोन्मुख प्रशिक्षण के अतिरिक्त आध्यात्मिक सत्संग तथा पुस्तकालय का भी संचालन किया जा रहा है।

पत्राचार से योग प्रशिक्षण :—श्री गुरुदेव द्वारा निर्देशित पत्राचार से सम्पूर्ण योग की शिक्षा देने की व्यवस्था की गई है। आरंभिक, माध्यमिक और उन्नत्त पाठ्यक्रम चलाए जाते हैं। प्रत्येक की अवधि ६ महीने की है।

आपके सहयोग का स्वरूप

ज्ञान यज्ञ :—आप आश्रम की पुस्तकों के प्रकाशन में आर्थिक सहयोग देकर ज्ञान–यज्ञ कर सकते हैं।

श्रम एवं समय दान :—दैनिक जीवन का कुछ समय सोसायटी को देकर आप इसके कार्यों के प्रसार में सहयोग कर सकते हैं। जीवन दानी स्त्री–पुरुष आमंत्रित हैं।

नियमित अनुदान :—समर्थ व्यक्ति नियमित अनुदान देकर एक महान योजना को क्रियान्वित करने में सहयोग दे सकते हैं।

सदस्यता

संस्थापक सदस्यः—जिन लोगों ने इस सोसायटी की स्थापना की है, वे इसके संस्थापक सदस्य हैं।

आजीवन सदस्य :—सोसायटी को एक बार ५००० रू० देकर आजीवन सदस्य बना जा सकता है। इन सबों को आश्रम की हिन्दी तथा अँग्रेजी पत्रिका आजीवन निःशुल्क भेजी जाती है तथा आश्रम के समस्त प्रकाशनों पर ३० प्रतिशत की छूट दी जाती है।

वार्षिक सदस्य :—सोसायटी की सदस्यता के लिए १५० रुपये वार्षिक राशि निर्धारित की गई है। ऐसे प्रत्येक सदस्य को एक वर्ष तक 'योगाञ्जलि' पत्रिका निःशुल्क भेजी जाती है तथा अन्य प्रकाशनों पर १० प्रतिशत की छूट दी जाती है।

संरक्षक सदस्यः—प्रतिमाह ५० रूपये या अधिक राशि अनुदान में देने का जो संकल्प करते हैं, उन्हें संरक्षक सदस्य माना जाता है। ऐसे सदस्यों को आश्रम के साहित्य निःशुल्क भेजे जाते हैं।

उपरोक्त सभी प्रकार के सदस्य पूज्य गुरुदेव से पत्राचार द्वारा सम्पर्क करने और मार्गदर्शन लेने के भी अधिकारी हैं। इन सबों को **योग रिसर्च फाउण्डेशन (अमेरिका)** की सदस्यता स्वतः प्राप्त हो जाती है।

श्रीस्वामी ज्योतिर्मयानन्द

जीवन परिचय

श्रीस्वामी ज्योतिर्मयानन्दजी का जन्म ३ फरवरी १९३१ को बिहार के सारण जिलान्तर्गत 'डुमरी–बुजुर्ग' नामक गाँव में हुआ था। २२ वर्ष की अवस्था में ही आप ऋषिकेश के महान सन्त **श्री स्वामी शिवानन्द जी** से सन्यास लेकर सुरेन्द्र से स्वामी ज्योतिर्मयानन्द बन गए। नौ वर्षों तक योग–वेदान्त आरण्य अकादमी ऋषिकेश में आध्यात्मिक व्याख्याता का कार्य करते हुए 'योग–वेदान्त' पत्रिका का सफल सम्पादन किया।

बहुत आग्रह के बाद आपने १९६२ में अमेरिका जाना स्वीकार किया। वहाँ इन्टरनेशनल योग सोसायटी की स्थापना करके मियामी में इसका मुख्य केन्द्र स्थापित किया।

अपने मुख्य आश्रम से स्वामीजी भारत की ज्ञान–ज्योति का प्रसार कर रहे हैं। भारतीय दर्शन पर अब तक आपकी ७५ पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं, जिनका अनुवाद विश्व की अनेक भाषाओं में हो चुका है।

इन्टरनेशनल योग गाइड अँग्रेजी तथा **योगांजलि** हिन्दी इन दो मासिक पत्रिकाओं के माध्यम से स्वामीजी की ज्ञान–गंगा में विश्व के लाखों साधक गोते लगाकर पावन बन रहे हैं।

आज अन्तराष्ट्रीय ज्ञान–गगन में स्वामीजी का स्थान सर्वोच्च है। प्रभात के प्रखर सूर्य सा प्रदीप्त स्वामीजी का प्रेरक साहित्य अज्ञानान्धकार में सुप्त असंख्य हृदयों को परमानन्द तथा परम–ज्ञान की ज्योति प्रदान कर रहा है। समस्त विश्व श्रीस्वामीजी को **योगमार्तण्ड** के रूप में अभिनन्दित करता है।

आश्रम के हिन्दी प्रकाशन

		P.B	H.B
१	योगाञ्जलि(मासिक-पत्रिका, वार्षिक)	१५०.००	
२	व्यावहारिकयोग		२००.००
३	धारणा और ध्यान	५०.००	६०.००
४	मृत्यु और पुनर्जन्म	५०.००	
५	सत्य अहिंसा ब्रह्मचर्य	५०.००	६०.००
६	देवीपूजा का रहस्य	५०.००	६०.००
७.	विद्यार्थियों को योग संदेश	५०. ००	६०. ००
८	सुख स्वास्थ्य के लिये योगासन	४०.००	८०.००
६	सकरात्मक सोच की कला		५०.००
१०	गृहस्थ जीवन निर्देशिका	३०.००	५०.००
११	आत्मोन्नति के लिए योग निबन्ध	३०.००	५०.००
१२	जीवन में योग	३०.००	५०.००
१३	योगसंदर्शिका	३०.००	५०.००
१४	सम्पूर्ण योग एक परिचय		५०.००
१५	अपनी-बात भाग-१	३०.००	५०.००
१६	योग से जीवन परिवर्तन	२५.००	५०.००
१७	मंत्र, तंत्र और कीर्तन	२५.००	५०. ००
१८	आज के सन्दर्भ में समन्वितयोग	२०.००	
१६	व्यावहारिक साधना		३०. ००
२०	योगविश्राम से स्वास्थ्य और सौंदर्य		३०.००
२१	ज्ञान योग	१५.००	२५.००
२२	सम्पूर्णयोग सार	१०.००	
२३.	वन्दन	५. ००	

English Books

1. International Yoga Guide(Yrly)	250.00
2. Applied Yoga 9" x 12" H.B	200.00
3 Death and Reincarnation "	200.00
4 Concentration and Meditation"	200.00
5 Mysteries of the Mind	200.00
6 The Art of Positive Feelings	100.00
7 Yoga vasistha Vol I,II,III,IV,V (Each)	80.00
8 Mysticism of the Ramayana	80.00
9 Mysticism of the Mahabharata	80.00
10 Mysticism of the Devi Mahatmya	80.00
11 YogaExercises for Health andHappiness	80.00
12 The Way to Liberation Vol I & II (Each)	80.00
13 Yoga for Sex Sublimation........	80.00
14 Advice to Students	60.00
15 Advice to house holders	60.00
16 Yoga can change your life	60.00
17 Yoga wisdom of Upanishad	60.00
18 Yoga secrets of Psychic powers	60.00
19 Yoga of Divine Love	60.00
20 Yoga Essays for Self-Improvement	60.00
21 Yoga of Perfection (Bhagwat Gita)	60.00
22 Yoga of Enlightenment (18thChapter)	60.00
23.The Art of Positive Thinking	60.00
24 Yoga Quotations	50.00
25 Vedanta in Brief	50.00
26 Raja Yoga Sutras	50.00
27 Yoga guide	50.00
28 Yoga in Life	50.00
29 Yoga Mystic Poems	50.00
30 Yoga Stories and Parables	50.00
31 Integral Yoga-A Primer Course	50.00
32 Bhagwat Gita (pocket size)	40.00
33 The Mystery of the Soul	40.00
34 Waking Dream and Deep Sleep	30.00
35. Mantra, Kirtana,Yantra and Tantra	30.00
36.Beauty and Health through Yoga Relaxation	30.00

37.Integral Yoga Today	**30.00**
38.Hindu Gods and Goddesses	**30.00**
39. Jnana Yoga	**30.00**

स्वामीजी के प्रमुख हिन्दी कैसेट

१. सच्चा साधक कैसे बनें, चिन्ता से मुक्ति कैसे
२. मिथ्याभिमान को कैसे दूर करें, सामाजिक संदर्भ में योग साधना
३. देवी पूजा संदेश
४. लोनी आश्रम उद्‌घाटन
५. अपनी प्रतिभा का विकास कैसे करें, समय का उपयोग कैसे
६. मन का नियंत्रण कैसे, योग क्या है?
७. ध्यान का अभ्यास कैसे करें
८. ईश्वर समर्पण कैसे विकसित करें, चिन्ता कैसे दूर करें
९. विजयदशमी संदेश, देवी सम्पत्ति एक परिचय
१०. सहन ीलता कैसे विकसित करें
११. द्वेष को कैसे दूर करें, अपने जीवन को कैसे समृद्ध बनायें
१२. आपका वास्तविक स्वरूप क्या है तनाव से मुक्ति कैसे

और अन्य कैसेट। प्रति कैसेट मूल्य ४०/- रुपये मात्र

LIST OF INSPIRING AUDIO

BY SRI SWAMI JYOTIRMAYANANDA

1. A 1	How to Remove Anxiety Overcome Arrogance
2. A 2	Advice to Youth
3. A 3	You Are The Architect of Your Destiny
4.A 4	Insight into Austerity I/ Insight into Austerity II
5. A 5	How to Face Adversity
6. B 1	How To Be Free of Bondage
7. B 2	Bhavana I-IV
8. B 3	Bhavana V-VIII
9. B 4	Bhagavata Purana
10. C 1	Compassion / Charity How to be Cheerful
11. C 2	How to Develop Contentment
12. D 1	Dispassion / Discrimination What is Dharma
13. D 2	Overcome Destiny/ Overcome Desires
14. E 1	What is Your Essential Nature How to Enrich Your Life
15. E 2	How to Practice Endurance
16. F 1	Fickleness of Mind, Forbearance How to Overcome Fault Finding Nature
17. F 2	How to Overcome Fear/ Insight into Faith
18. G 1	Absence of Greed Presence of God
19. G 2	Message of the Gita
20. G 3	Bhagavad Gita [8 Volumes]
21. H 1	Humility / Hypocrisy How to Overcome Hatred

22. H 2	How to Serve Humanity/
23. H 3	How to enhance heath & Vitalty
	How to develop mental heath 192
24. 11	Insight into Divine Incarnations
	how to Control Imaginations
25. 12	Overcoming Intolerance
26. J 1	How to Remove Jealousy
27. K 1	Kundalini Yoga
28. L 1	What is Love?
29. M 1	Meditation (Guided)
30. M 2	How to Practice Mantra Japa
	How to Be Magnanimous
31. M 3	Mysticism of Lord Ganesha
	Mysticism of Lord Krishna's Birth
32. M 4	Control of Mind
33. M 5	States of Mind / Mental Serenity
34. M 6	Mahabharata 11.2.86 (A)
35. M 6	Mahabharata IV 22-12-1-75 (B)
36. M 7	Mantra, Kirtan & Ashram Bhajan
37. M 8	How to Practice Meditation
38. M 9	Meditation Classes
39. M 10	Meditation 4.8.79
40. M 11	Meditation 2.21.81
41. M 12	Guided Meditation on Dahara
	Upasana [8 volumes]
42. M 13	Guided Meditation /Madhuvidya
	Upasana [8 volumes]
43. M 14	Mantra Initiation by Swamiji
44. M 15	Morning Puja
45. M 16	Meaning of Mother Worship/
	How to Elevate Your Mind
46. M 17	Five states of Mind I & II 817
47. M 18	Five states of Mind III & IV 818
48. M 19	Five states of Mind V
49. N 1	Narada Bhakti Sutras [3 volumes]
50. N 2	Nonstealing/ Noncovetousness/
	Nonviolence
51. P 1	How to Unfold Your hidden
	Potentialities / How to Overcome
	False Pride

52. P 2	Insight into Virtue of Patience/ Strive for perfection
52. P 3	Progress and How to Promote it
53. P 4	Panchdasi [8 volumes]
54. P 5	How to Acquire Peace of Mind
55. P 6	How to Live in Presence How to see Positive in Others
56. P 7	How to solve Problems
57. P 8	Overcome Procrastination Be Practical
58. P 9	How to Pray / Psychicpower
59. P 10	Purpose of Life
60. P 11	How to be free from Past How to overcome Pessimism
61. R 1	Art of Relaxation / Recreation
62. R 2	Relaxation Exercises
63. R 3	Renunciation / How to be ratioal
64. R 4	Ramayana
65. R 5	Raja Yoga [27 volumes]
66. R 6	Reflection on Brahman I & II 805
67. S 1	How to educate subconscious How to Withdraw Senses
68. S 2	How to be aTrue Sadhak How to Develop Surrender to God
69. S 3	How to Succeed in Life How to Reduce Stress in Daily Life
70. S 4	Art of Divine surrender Glory of Satsanga
71. S 5	Study of Scriptures
72. S 6	Spiritualism vs Spirituality Spiritual Path
73. S 7	Insight into Inner Self Value of self Discipline
74. S 8	Simplify Yourself / Managing Stress Through Surrender to God
75. S 9	Sandilya Bhakti Sutras
76. S 10	Spiritual Talk 705 - 708
77. S 11	Secret of Self restraint/ Secret of Sex Restraint
78. T 1	Hindu Ethics for Teen

79. T 2	How to Develop Your Talent
.	How To Utilise Your Time
80. T 3	Tantra Yoga / Practice of Truth
81. T 4	Positive Thinking I - IV
82. T 5	Positive Thinking V - VII
83. T 6	Tat Twam Asi
84. U 1	Upasana - Prana, Bhuma & Soham
85. U 2	Upasana-Madhuvidya, Antaryami
86. U 3	Upasana-Akshara, Vidya, Vibhuti Gaytri, Mahamritunjaya
87. U 4	Mandukya Upanishad [2 volumes]
88. U 5	Taitiriya Upanishad
89. U 6	Brihadaranyaka Upanmishad [2]
90. U 7	Madhu Vidya Upasana Antaryami Upasana / Samvarg Upasan
91. U 8	Introductioan to Upasana / Om Upasana Dahara Upasana/Shri Vidya upasana
92. V 1	Cultivation of Virtue
93. V 2	How to Practice Vairagya How to Overcome Vanity
94.W 1	Steadiness in Wisdom Insight into Divine Wealth
95. Y 1	Practice of Yoga in World
96. Y 2	What is Yoga?
97. Y 3	Yoga Vasistha [25 volumes]
98. Y 4	Bhakti Yoga/ 198 Jnana Yoga
99. Y 5	Karma Yoga/ Raja Yoga
100. Y 6	Integral Yoga
101. Y 7	Insight into Yoga Ethics Who am I ?
102. Y 8	Bhakti Yoga (recorded at Florida International University)

OTHERCASSETTES

(Each cassettes Rs. 40/=)

OTHER IMPORTANT CASSETTES (Home Study)

"Hatha Yoga Exercises"
"What is Yoga"
"You are the Architect of Your Destiny"
Mantra Kirtana
How to Acquire Peace of Mind
How to Live in the Present and How to Develop Endurance.
Relaxation Exercises,
How to Utilize Your Time, How to Develop Your Talents,
How to Practise Meditation. and
Spirituality Vs. Spiritualism.
"The Message of the Gita."
"How to Elevate Your Mind."
"What is Love?".
"What is Dharma." How to Face Adversity."
"How to Pray." and "How to Serve Humanity."
'Kundalini Yoga - Psychic powers.'
'How to Solve problems-Develop Good will.'
Overcone 'Destiny -How to Overcome Desires.'
'Overcome Procrastination. How to be Practical.'
Bhakti Yoga.
Jnana Yoga. Karma Yoga,
Raja Yoga.
Integral Yoga.
What is the purpose of Life?.
Meditation class,
Bhagavata Purana Lecture.
Raja Yoga.
Raja Yoga I-22, I-23, II-I II-3, II-5, II-6.
Raja Yoga II-7, II-8, II-9, II-13

Concentration and Meditation II-15, II-17, II-18,
II-19, II-20
Raja Yoga-II-23, II-24, II-25, III-2
Jabal Darshanopnishad III-10
Jabal Barshanopanishad III-6, III-7, III-8
Meditation (August 4, 1979)
Yoga Vasistha X5
Enquity of "Who Am I" / Insight into Yoga Ethics
Bhagavad Gita II-22
Raja Yoga I-8
Yoga Vasistha I-10, I-16, XI-22
How to Practice Vairagya / How to Overcome Vanity
How to Practice Endurance / How to See the Positve in Others.
Narada Bhakti Sutras I-7, I-2, II-12
Ramayana IV-11
Bhagavad Gita III-7, III-16, III-18, III-21
Bhakti Yoga (Recorded at Florida International University class)
Morning Puja / Meaning of Mother Worship
Yoga Vasistha XIV-11, XII-5, XII-7, XIII-11, VIII-21, XV-12, XV-13, XV-14.
Bhagavad Gita II-25
How to Develop Mental Serenity / How to Develop Contentment.
Panchadashi-I-24, II-14, II-16, II-17, II-21, V-8.
Yoga Vasistha V-6, XVII-19:
Meditation (2-21-81
Upanishad II-22:
Panchadashi V-9:
Yoga Vasistha XVIII-17, XIX-19, XIX-20, XIX-21, XX-10:
Brihadaranyaka Upanishad II-5 and II-11.
Spiritual Talks 750-708, 713-716; Guided Meditation on Dahara Upasana and Madhu Vidya Upasana.

(Each cassettes Rs. 40/=)

ॐ

मयामी, फ्लोरिडा
यू० एस० ए०

दिव्यात्मन्
नमस्कार !

जीवन की प्रत्येक स्थिति ईश्वरीय विधान के अनुसार होती है। विपत्ति के समय धैर्य विकसित करना चाहिए; समृद्धि में विनीत भाव तथा प्रत्येक स्थिति में शांति।

यदि समृद्धि में प्रमाद से भर जाते हो तो विपत्ति के समय अवश्य विचलित हो जाओगे। विपत्ति का सामना ईश्वरेच्छा के प्रति समर्पण भाव से करो।

याद रखो कि यह स्थिति क्षणिक है - बीत जायेगी। अपने चित्त को व्याकुल न बनाओ

शुभ कर्मों को करते हुए कर्म फल से अनासक्त रहो। ईश्वर की ओर अग्रसर होते जाओ।

ईश्वर तुम्हारा सर्वतोमुखी कल्याण करें। सादर-प्रेम-ॐ

आत्मस्वरूप
स्वामी ज्योतिर्मयानंद
ॐ